प्रेमचंद

शेख सादी

[हिन्दीकोश]

Tittle: Shekh Sadi

Author: Premchand

Release Date: 30 Jan 2021

Edition: 1.0

Language: Hindi

While every precaution has been taken in the preparation of this book, the publisher assumes no responsibility for errors or omissions, or for damages resulting from the use of the information contained herein.

Suggestions and corrections are welcome.

Visit https://www.hindikosh.in for more...

सूची

1. जन्म
2. युवावस्था
3. भ्रमण
4. शीराज़ में पुनरागमन
5. चरित्र
6. रचनाएँ और उनका महत्त्व
7. गुलिस्ताँ
    - गुलिस्ताँ का कथाएँ
8. बोस्ताँ
    - बोस्ताँ की कथायें
9. सादी की लोकोक्तियाँ
10. ग़जलें
11. क़सीदे
12. अन्य प्रसंग

शेख़ सादी

1. जन्म

शेख़ मुसलहुद्दीन (उपनाम सादी) का जन्म सन् 1172 ई. में शीराज़ नगर के पास एक गाँव में हुआ था। उनके पिता का नाम अब्दुल्लाह और दादा का नाम शरफुद्दीन था। 'शेख़' इस घराने की सम्मान सूचक पदवी थी। क्योंकि उनकी वृत्ति धार्मिक शिक्षा-दीक्षा देने की थी। लेकिन इनका ख़ानदान सैयद था। जिस प्रकार अन्य महान् पुरुषों के जन्म के सम्बन्ध में अनेक अलौकिक घटनाएँ प्रसिद्ध हैं उसी प्रकार सादी के जन्म के विषय में भी लोगों ने कल्पनायें की हैं। लेकिन उनके उल्लेख की जरूरत नहीं। सादी का जीवन हिंदी तथा संस्कृत के अनेक कवियों के जीवन की भाँति ही अंधकारमय है। उनकी जीवनी के सम्बन्ध में हमें अनुमान का सहारा लेना पड़ता है यद्यपि उनका जीवन वृत्तान्त फारसी ग्रन्थों में बहुत विस्तार के साथ है तथापि उसमें अनुमान की मात्रा इतनी अधिक है कि गोली से भी, जिसने सादी का चरित्र अंग्रेजी में लिखा है, दूध और पानी का निर्णय न कर

सका। कवियों का जीवन-चरित्र हम प्राय– इसलिए पढ़ते हैं कि हम कवि के मनोभावों से परिचित हो जायँ और उसकी रचनाओं को भलीभाँति समझने में सहायता मिले। नहीं तो हमको उन जीवन-चरित्रों से और कोई विशेष शिक्षा नहीं मिलती। किन्तु सादी का चरित्र आदि से अन्त तक शिक्षापूर्ण है। उससे हमको धैर्य, साहस और कठिनाइयों में सत्पथ पर टिके रहने की शिक्षा मिलती है।

शीराज़ इस समय फारस का प्रसिद्ध स्थान है और उस जमाने में तो वह सारे एशिया की विद्या, गुण और कौशल की खान था। मिश्र, इराक, हब्श, चीन, खुरासान आदि देश देशान्तरों के गुणी लोग वहाँ आश्रय पाते थे। ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, धर्मशास्त्र आदि के बड़े-बड़े विद्यालय खुले हुए थे। एक समुन्नत राज्य में साधारण समाज की जैसी अच्छी दशा होनी चाहिए वैसी ही वहाँ थी। इसी से सादी को बाल्यावस्था ही से विद्वानों के सत्संग का सुअवसर प्राप्त हुआ। सादी के पिता अब्दुल्लाह का 'साद बिन जंग़ी' (उस समय ईरान का बादशाह) के दरबार में बड़ा मान था। नगर में भी यह परिवार अपनी विद्या और धार्मिक जीवन के कारण बड़ी सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। सादी बचपन से ही अपने पिता के साथ महात्माओं और गुणियों से मिलने जाया करते थे। इसका प्रभाव उनके अनुकरणशील स्वभाव पर अवश्य ही पड़ा होगा। जब सादी पहली बार साद बिन जंगी के

दरबार में गये तो बादशाह ने उन्हें विशेष स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखकर पूछा, "मियाँ लड़के, तुम्हारी उम्र क्या है?" सादी ने अत्यंत नम्रता से उत्तर दिया, "हुजूर के गौरवशील राज्यकाल से पूरे 12 साल छोटा हूँ।" अल्पावस्था में इस चतुराई और बुद्धि की प्रखरता पर बादशाह मुग्ध हो गया। अब्दुल्लाह से कहा, बालक बड़ा होनहार है, इसके पालन-पोषण तथा शिक्षा का उत्तम प्रबन्ध करना। सादी बड़े हाजिर जवाब थे, मौके की बात उन्हें ख़ूब सूझती थी। यह उसका पहला उदाहरण है।

शेख़ सादी के पिता धार्मिक वृत्ति के मनुष्य थे। अतः उन्होने अपने पुत्र की शिक्षा में भी धर्म का समावेश अवश्य किया होगा। इस धार्मिक शिक्षा का प्रभाव सादी पर जीवन पर्यन्त रहा। उनके मन का झुकाव भी इसी ओर था। वह बचपन ही से रोजा, नमाज आदि के पाबन्द रहे। सादी के लिखने से प्रकट होता है कि उनके पिता का देहान्त उनके बाल्यकाल ही में हो गया था। संभव था कि ऐसी दुरवस्था में अनेक युवकों की भाँति सादी भी दुर्व्यसनों में पड़ जाते लेकिन उनके पिता की धार्मिक शिक्षा ने उनकी रक्षा की।

यद्यपि शीराज़ में उस समय विद्वानों की कमी न थी और बड़े-बड़े विद्यालय स्थापित थे, किन्तु वहाँ के बादशाह साद बिन जंग़ी को लड़ाई करने की

ऐसी धुन थी कि वह बहुधा अपनी सेना लेकर इराक पर आक्रमण करने चला जाया करता था और राजकाज की तरफ से बेपरवा हो जाता था। उसके पीछे देश में घोर उपद्रव मचते रहते थे और बलवान शत्रु देश में मारकाट मचा देते थे। ऐसी कई दुर्घटनायें देखकर सादी का जी शीराज़ से उचट गया। ऐसी उपद्रव की दशा में पढ़ाई क्या होती? इसलिए सादी ने युवावस्था में ही शीराज़ से बग़दाद को प्रस्थान किया।

2. युवावस्था

बग़दाद उस समय तुर्क साम्राज्य की राजधानी था। मुसलमानों ने बसरा से यूनान तक विजय प्राप्त कर ली थी और सम्पूर्ण एशिया ही में नहीं, यूरोप में भी उनका-सा वैभवशाली और कोई राज्य नहीं था। राज्य विक्रमादित्य के समय में उज्जैन की और मौर्यवंश राज्य काल में पाटलिपुत्र की जो उन्नति थी वही इस समय बग़दाद की थी। बग़दाद के बादशाह खलीफा कहलाते थे। रौनक और आबादी में यह शहर शीराज़ से कहीं चढ़ा बढा था। यहाँ के कई ख़लीफ़ा बड़े विद्याप्रेमी थे। उन्होंने सैकड़ों विद्यालय स्थापित किये थे। दूर-दूर से विद्वान लोग पठन-पाठन के निमित्त आया करते थे। यह कहने में

अत्युक्ति न होगी कि बग़दाद का सा उन्नत नगर उस समय संसार में नहीं था। बड़े-बड़े आलिम, फ़ाजिल, मौलवी, मुल्ला, विज्ञानवेत्ता और दार्शनिकों ने जिनकी रचनायें आज भी गौरव की दृष्टि से देखी जाती हैं बग़दाद ही के विद्यालय में शिक्षा पायी। विशेषतः 'मदरसए नज़मिया' वर्त्तमान आक्सफोर्ड या बर्लिन की यूनिवर्सिटियों से किसी तरह कम न था। सात-आठ, सहस्र छात्र उनमें शिक्षा पाते थे। उसके अध्यापकों और अधिष्ठाताओं में ऐसे-ऐसे लोग हो गये हैं जिनके नाम पर मुसलमानों को आज भी गर्व है। इस मदरसे की बुनियाद एक ऐसे विद्या प्रेमी ने डाली थी जिसके शिक्षा प्रेम के सामने शायद कारनेगी भी लज्जित हो जाय। उसका नाम निज़ामुलमुल्कतूसी था। जलालुद्दीन सलजूकी के समय में वह राज्य का प्रधानमंत्री था। उसने बग़दाद के अतिरिक्त बसरा, नेशापुर, इसफ़ाहन आदि नगरों में भी विद्यालय स्थापित किये थे। राज्यकोष के अतिरिक्त अपने निज के असंख्य रुपये शिक्षोन्नति में व्यय किया करता था। 'नजामिया' मदरसे की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई थी। सादी ने इसी मदरसे में प्रवेश किया। यह निश्चित नहीं है कि वह कितने दिनों बग़दाद में रहे। लेकिन उनके लेखों से मालूम होता है कि वहाँ फिक़ह (धर्मशास्त्र), हदीस आदि के अतिरिक्त उन्होंने विज्ञान, गणित, खगोल, भूगोल, इतिहास आदि विषयों का अच्छी तरह अध्ययन

किया और 'अल्लामा' की सनद प्राप्त की। इतने गहन विषयों के पंडित होने के लिए सादी से दस वर्ष से कम न लगे होंगे।

काल की गति विचित्र है। जिस समय सादी ने बग़दाद से प्रस्थान किया उस समय उस नगर पर लक्ष्मी और सरस्वती दोनों ही की कृपा थी, लेकिन लगभग बीस वर्ष बाद उन्होंने उसी समृद्धिशाली नगर को हलाकू खाँ के हाथों नष्ट-भ्रष्ट होते देखा और अन्तिम ख़लिफा जिसके दरबार में बड़े-बड़े राजा रईसों की भी मुश्किल से पहुँच होती थी, बड़े अपमान और क्रूरता से मारा गया।

सादी के हृदय पर इस घोर विप्लव का ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने अपने लेखों में बारम्बार नीतिरक्षा, प्रजापालन तथा न्यायपरता का उपदेश दिया है। उनका विचार था और उसके यथार्थ होने में कोई सन्देह नहीं कि न्यायप्रिय, प्रजा वत्सल राजा को कोई शत्रु पराजित नहीं कर सकता। जब इन गुणों में कोई अंश कम हो जाता है तभी उसे बुरे दिन देखने पड़ते हैं। सादी ने दीनों पर दया, दुखियों से सहानुभूति, देशभाइयों से प्रेम आदि गुणों का बड़ा महत्व दर्शाया है। कोई आश्चर्य नहीं कि उनके उपदेशों में जो सजीवता दिख पड़ती है वह इन्हीं हृदय विचारक दृश्यों से उत्पन्न हुई हो।

3. भ्रमण

मुसलमान यात्रियों में इब्नबतुता (प्रख्यात यात्री एवं महत्त्वपूर्ण ग्रंथ ‘सफ़रनामा’ का लेखक) सबसे श्रेष्ठ जाता है। सादी के विषय में विद्वानों ने स्थिर किया है कि उनकी यात्रायें 'बतूता' से कुछ ही कम थीं। उस समय के सभ्य संसार में ऐसा कोई स्थान न था जहाँ सादी ने पदार्पण न किया हो। वह सदैव पैदल सफर किया करते थे। इससे विदित हो सकता है कि उनका स्वास्थ्य कैसा अच्छा रहा होगा और वह कितने बड़े परिश्रमी थे। साधारण वस्त्रों के सिवा वह अपने साथ और कोई सामान न रखते थे। हाँ, रक्षा के लिए एक कुल्हाड़ा ले लिया करते थे। आजकल के यात्रियों की भाँति पाकेट में नोटबुक दबाकर गाइड (पथदर्शक) के साथ प्रसिद्ध स्थानों का देखना और घर पहुँच यात्रा का वृत्तांत छपवाकर अपनी विद्वता दर्शाना सादी का उद्देश्य न था। वह जहाँ जाते थे महीनों रहते थे। जन-समुदाय के रीति-रिवाज, रहन-सहन और आचार-व्यवहार को देखते थे, विद्वानों का सत्संग करते थे और जो विचित्र बातें देखते थे उन्हें अपने स्मरण-कोष में संग्रह करते जाते थे। उनकी गुलिस्ताँ और बोस्ताँ दोनों ही पुस्तकें इन्हीं अनुभवों के फल हैं। लेकिन उन्होंने विचित्र जीव जन्तुओं, कोरे प्राकृतिक

दृश्यों अथवा अद्‌भुत वस्त्राभूषणों के गपोड़ों से अपनी किताबें नहीं भरीं। उनकी दृष्टि सदैव ऐसी बातों पर रहा करती थी जिनका कोई सदाचार सम्बन्धी परिणाम हो सकता हो, जिनसे मनोवेग और वृत्तियों का ज्ञान हो, जिनसे मनुष्य की सज्जनता या दुर्जनता का पता चलता हो, सदाचरण, पारस्परिक व्यवहार और नीति पालन उनके उपदेशों के विषय थे। वह ऐसी ही घटनाओं पर विचार करते थे, जिनसे इन उच्च उद्देश्यों की पूर्ति हो। यह आवश्यक नहीं था कि घटनाएँ अद्‌भुत ही हों। नहीं, वह साधारण बातों से भी ऐसे सिद्धान्त निकाल लेते थे जो साधारण बुद्धि की पहुँच से बाहर होते थे। निम्नलिखित दो-चार उदाहरणों से उनकी यह सूक्ष्मदर्शिता स्पष्ट हो जायगी।

मुझे 'केश' नामी द्वीप में एक सौदागर से मिलने का संयोग हुआ। उसके पास सामान से लदे हुए एक सौ पचास ऊँट, और चालीस ख़िदमतगार थे। उसने मुझे अपना अतिथि बनाया। सारी रात अपनी राम कहानी सुनाता रहा कि मेरा इतना माल तुर्किस्तान में पड़ा है, इतना हिन्दुस्तान में, इतनी भूमि अमुक स्थान पर है, इतने मकान अमुक स्थान पर, कभी कहता, मुझे मिश्र जाने का शौक है लेकिन वहाँ की जलवायु हानिकारक है। जनाब शेख़ साहिब, मेरा विचार एक और यात्रा करने का है, अगर वह पूरी हो जाय तो फिर एकान्तवास करने लगूँ। मैंने पूछा वह कौन-सी यात्रा है? तो आप बोले,

पारस का गन्धाक चीन देश में ले जाना चाहता हूँ, क्योंकि सुना है, वहाँ इसके अच्छे दाम खड़े होते हैं। चीन के प्याले रूम ले जाना चाहता हूँ, वहाँ से रूमका। 'देबा' (एक प्रकार का बहुमूल्य रेशमी कपड़ा) लेकर हिन्दुस्तान में और हिन्दुस्तान का फौलाद 'हलब' में और हलब का आईना यमन में और यमन की चादरें लेकर पारस लौट जाऊँगा। फिर चुपके से एक दुकान कर लूँगा और सफर छोड़ दूँगा, आगे ईश्वर मालिक है। उसकी यह तृष्णा देखकर मैं उकता गया और बोला, आपने सुना होगा कि 'ग़ोर' का एक बहुत बड़ा सौदागर जब घोड़े से गिरकर मरने लगा तो उसने एक ठंडी सांस लेकर कहा, तृष्णावान मनुष्य की इन दो आँखों को सन्तोष ही भर सकता है या कब्र की मिट्टी।

कोई थका-माँदा भूख का मारा बटोही एक धनवान के घर जा निकला। वहाँ उस समय आमोद-प्रमोद की बातें हो रही थीं। किन्तु उस बेचारे को उनमें जरा भी मजा न आता था। अन्त में गृहस्वामी ने कहा, जनाब, कुछ आप भी कहिये। मुसाफिर ने जवाब दिया, क्या कहूँ मेरा भूख से बुरा हाल है। स्वामी ने लौंडी से कहा, खाना ला। दस्तरख़्वान बिछाकर खाना रक्खा गया। लेकिन अभी सभी चीजें तैयार न थीं। स्वामी ने कहा, कृपा कर ज़रा ठहर जाइए अभी कोफता तैयार नहीं है। इस पर मुसाफिर ने यह शेर पढ़ा

—

कोफता दर सफ़र ये मागो मुबाश,

कोफता रा नाने-तिही कोफतास्त।

भावार्थ – मुझे कोफते की जरुरत नहीं है। भूखे आदमी की खाली रोटी ही कोफता है।

एक बार मैं मित्रों और बन्धुओं से उकताकर फिलस्तीन के जंगल में रहने लगा। उस समय मुसलमानों और ईसाइयों में लड़ाई हो रही थी। एक दिन ईसाइयों ने मुझे कैद कर लिया और खाई खोदने के काम पर लगा दिया। कुछ दिन बाद वहाँ हलब देश का एक धनाढ्य मनुष्य आया, वह मुझे पहचानता था। उसे मुझ पर दया आयी। वह दस दीनार देकर मुझे कैद से छुड़ाकर अपने घर ले गया और कुछ दिन बाद अपनी लड़की से मेरा निकाह करा दिया। वह स्त्री कर्कशा थी। आदर-सत्कार तो दूर, एक दिन क्रुद्ध होकर बोली, क्यों साहिब, तुम वही हो न जिसे मेरे पिता ने दस दीनार पर खरीदा था। मैंने कहा, जी हाँ, मैं वहीं लाभकारी वस्तु हूँ जिसे आपके पिता ने दस दीनार पर ख़रीद कर आपके हाथ सौ दीनार पर बेच दिया। यह वही मसल हुई कि एक धर्मात्मा पुरुष किसी बकरी को भेड़िये के पंजे से छुड़ा लाया। लेकिन रात को उस बकरी को उसने खुद ही मार डाला।

मुझे एक बार कई फकीर साथ सफर करते हुए मिले। मैं अकेला था। उनसे कहा कि मुझे भी साथ लेते चलिये। उन्होंने स्वीकार न किया। मैंने कहा, यह रुखाई साधुओं को शोभा नहीं देती। तब उन्होंने जवाब दिया, नाराज़ होने की बात नहीं, कुछ दिन हुए एक मुसाफिर को इसी तरह साथ ले लिया था, एक दिन एक किले के नीचे हम लोग ठहरे। उस मुसाफिर ने आधी रात को हमारा लोटा उठाया कि लघुशंका करने जाता हूँ। लेकिन खुद ग़ायब हो गया। यहाँ तक भी कुशल थी। लेकिन उसने किले में जाकर कुछ जवाहरात चुराये और खिसक गया। प्रातःकाल किले वालों ने हमें पकड़ा। बहुत खोज के पीछे उस दुष्ट का पता मिला, तब हम लोग कैद से मुक्त हुए। इसलिए हम लोगों ने प्रण कर लिया है कि अनजान आदमी को अपने साथ न लेंगे।

दो खुरासानी फकीर साथ सफर कर रहे थे। उनमें एक बुड्ढ़ा दो दिन के बाद खाना खाता था। दूसरा जवान दिन में तीन बार भोजन पर हाथ फेरता था। संयोग से दोनों किसी शहर में जासूसी के भ्रम में पकड़े गये। उन्हें एक कोठरी में बंद करके दीवार चुनवा दी गयी। दो सप्ताह बाद मालूम हुआ कि दोनों निरपराध हैं। इसलिये बादशाह ने आज्ञा दी कि उन्हें छोड़ दिया जाय। कोठरी की दीवार तोड़ी गयी, जवान मरा मिला और बूढ़ा जीवित। इस पर लोग बड़ा कौतूहल करने लगे। इतने में एक बुद्धिमान पुरुष उधर से

आ निकला। उसने कहा, इसमें आश्चर्य क्या है, इसके विपरीत होता तो आश्चर्य की बात थी।

एक साल हाजियों के काफ़िले में फूट पड़ गयी। मैं भी साथ ही यात्रा कर रहा था। हमने खूब लड़ाई की। एक ऊँटवान ने हमारी यह दशा देखकर अपने साथी से कहा, खेद की बात है कि शतरंज के प्यादे तो जब मैदान पार कर लेते हैं, तो वज़ीर बन जाते हैं, मगर हाजी प्यादे ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते हैं, पहले से भी ख़राब होते जाते हैं। इनसे कहो, तुम क्या हज करोगे जो यों एक-दूसरे को काटे खाते हो। हाजी तो तुम्हारे ऊँट हैं, जो काँटे खाते हैं और बोझ भी उठाते हैं।

रूम में एक साधु महात्मा की प्रशंसा सुनकर हम उनसे मिलने गये। उन्होंने हमारा विशेष स्वागत किया, किन्तु खाना न खिलाया। रात को वह तो अपनी माला फेरते रहे और हमें भूख से नींद नहीं आयी। सुबह हुई तो उन्होंने फिर वही कल का सा आगत-स्वागत आरंभ किया। इस पर हमारे एक मुँहफट मित्र ने कहा, महात्मन्, अतिथि के लिए इस सत्कार से अधिक ज़रूरत भोजन की है। भला ऐसी उपासना से कभी उपकार हो सकता है जब कई आदमी घर में भूख के मारे करवटें बदलते रहें।

एक बार मैंने एक मनुष्य को तेंदुए पर सवार देखा। भय से काँपने लगा। उसने यह देखकर हँसते हुए कहा, सादी डरता क्यों है, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। यदि मनुष्य ईश्वर की आज्ञा से मुँह न मोड़े तो उसकी आज्ञा से भी कोई मुँह नहीं मोड़ सकता।

सादी ने भारत की यात्रा भी की थी। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि वह चार बार हिन्दुस्तान आये, परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं। हाँ, उनका एक बार यहाँ आना निर्भ्रान्त है। वह गुजरात तक आये और शायद वहीं से लौट गये। सोमनाथ के विषय में उन्होंने एक घटना लिखी है जो शायद सादी के यात्रा वृत्तांत में सबसे अधिक कौतूहल जनक है।

जब मैं सोमनाथ पहुँचा तो देखा कि सहस्रों स्त्री-पुरुष मन्दिर के द्वार पर खड़े हैं। उनमें कितने ही मुरादें माँगने दूर-दूर से आये हैं। मुझे उनकी मूर्खता पर खेद हुआ। एक दिन मैंने कई आदमियों के सामने मूर्ति पूजा की निंदा की। इस पर मंदिर के बहुत से पुजारी जमा हो गये, और मुझे घेर लिया। मैं डरा कि कहीं यह लोग मुझे पीटने न लगें। मैं बोला, मैंने कोई बात अश्रद्धा से नहीं कहीं। मैं तो खुद इस मूर्ति पर मोहित हूँ, लेकिन मैं अभी यहाँ के गुप्त रहस्यों को नहीं जानता इसलिए चाहता हूँ कि इस तत्त्व का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके उपासक बनूँ। पुजारियों को मेरी यह बातें पसंद आयीं।

उन्होंने कहा, आज रात को तू मंदिर में रह। तेरे सब भ्रम मिट जायेंगे। मैं रातभर वहाँ रहा। प्रातःकाल जब नगरवासी वहाँ एकत्रित हुए तो उस मूर्ति ने अपने हाथ उठाये जैसे कोई प्रार्थना कर रहा हो। यह देखते ही सब लोग जय-जय पुकारने लगे। जब लोग चले गये तो पुजारी ने हँसकर मुझसे कहा, क्यों अब तो कोई शंका नहीं रही? मैं कृत्रिम भाव बनाकर रोने लगा और लज्जा प्रकट की। पुजारियों को मुझ पर विश्वास हो गया। मैं कुछ दिनों के लिए उनमें मिल गया। जब मंदिर वालों का मुझ पर विश्वास जम गया तो एक रात को अवसर पाकर मैंने मंदिर का द्वार बन्द कर दिया और मूर्ति के सिंहासन के निकट जाकर ध्यान से देखने लगा। वहाँ मुझे एक परदा दिखाई पड़ा जिसके पीछे एक पुजारी बैठा था। उसके हाथ में एक डोर थी। मुझे मालूम हो गया कि जब यह उस डोर को खींचता है तो मूर्ति का हाथ उठ जाता है। इसी को लोग दैविक बात समझते हैं।

यद्यपि सादी मिथ्यावादी नहीं थे तथापि इस वृत्तांत में कई बातें ऐसी हैं जो तर्क की कसौटी पर नहीं कसी जा सकतीं। लेकिन इतना मानने में कोई आपत्ति न होनी चाहिए कि सादी गुजरात आये और सोमनाथ में ठहरे थे।

4. शीराज़ में पुनरागमन

तीस-चालीस साल तक भ्रमण करने के बाद सादी को जन्म-भूमि का स्मरण हुआ । जिस समय वह वहाँ से चले थे, वहाँ अशांति फैली हुई थी। कुछ तो इस कुदशा और कुछ विद्या लाभ की इच्छा से प्रेरित होकर सादी ने देशत्याग किया था। लेकिन अब शीराज़ की वह दशा न थी। साद बिन जंग़ी की मृत्यु हो चुकी थी और उसका बेटा अताबक अबूबक राजगद्दी पर था। यह न्याय-प्रिय, राज्य-कार्य-कुशल राजा था। उसके सुशासन ने देश की बिगड़ी हुई अवस्था को बहुत कुछ सुधार दिया था। सादी संसार को देख चुके थे। अवस्था वह आ पहुँची थी जब मनुष्य को एकांतवास की इच्छा होने लगती है, सांसारिक झगड़ों से मन उदासीन हो जाता है। अतएव अनुमान कहता है कि पैंसठ या सत्तर वर्ष की अवस्था में सादी शीराज़ आये। यहाँ समाज और राजा दोनों ने ही उनका उचित आदर किया। लेकिन सादी अधिकतर एकांतवास ही में रहते थे। राज-दरबार में बहुत कम आते-जाते। समाज से भी किनारे रहते। इसका कदाचित् एक कारण यह भी था कि अताबक अबूबक को मुल्लाओं और विद्वानों से कुछ चिढ़ थी। वह उन्हें पाखंडी और उपद्रवी समझता था। कितने ही सर्वमान्य

विद्वानों को उसने देश से निकाल दिया था। इसके विपरीत वह मूर्ख फ़कीरों की बहुत सेवा और सत्कार करता; जितना ही अपढ़ फ़कीर होता उतना ही उसका मान अधिक करता था। सादी विद्वान भी थे, मुल्ला भी थे, यदि प्रजा से मिलते-जुलते तो उनका गौरव अवश्य बढ़ता और बादशाह को उनसे खटका हो जाता। इसके सिवा यदि वह राज-दरबार के उपासक बन जाते तो विद्वान लोग उन पर कटाक्ष करते। इसलिए सादी ने दोनों से मुँह मोड़ने में ही अपना कल्याण समझा और तटस्थ रहकर दोनों के कृपापात्र बने रहे। उन्होंने गुलिस्ताँ और बोस्ताँ की रचना शीराज़ ही में की, दोनों ग्रंथों में सादी ने मूर्ख साधु, फ़कीरों की खूब ख़बर ली है और राजा, बादशाहों को भी न्याय, धर्म और दया का उपदेश किया है। अंध-विश्वास पर सैकड़ों जगह धार्मिक चोटें की हैं। इनका तात्पर्य यही था कि अताबक अबूबक सचेत हो जाय और विद्वानों से द्रोह करना छोड़ दे। सादी को बादशाह की अपेक्षा युवराज से अधिक स्नेह था। इसका नाम फ़ख़रूददीन था। वह बग़दाद के ख़लीफ़ा के पास कुछ तुहफ़े भेंट लेकर मिलने गया था। लौटती बार मार्ग ही में उसे अपने पिता के मरने का समाचार मिला। युवराज बड़ा पितृभक्त था। यह ख़बर सुनते ही शोक से बीमार पड़ गया और रास्ते ही में परलोक सिधार गया। इन दोनों मृत्युओं से सादी को इतना शोक हुआ कि वह शीराज़ से फिर निकल खड़े हुए और बहुत दिनों

तक देश-भ्रमण करते रहे। मालूम होता है कि कुछ काल के उपरांत वह फिर शीराज़ आ गये थे, क्योंकि उनका देहांत यहीं हुआ। उनकी कब्र अभी तक मौजूद है, लोग उसकी पूजा, दर्शन (ज़ियारत) करने जाया करते हैं। लेकिन उनकी संतानों का कुछ हाल नहीं मिलता है। संभवतः सादी की मृत्यु 1288 ई. के लगभग हुई। उस समय उनकी अवस्था एक सौ सोलह वर्ष की थी। शायद ही किसी साहित्य सेवी ने इतनी बड़ी उम्र पायी हो।

सादी के प्रेमियों में अलाउद्दीन नाम का एक बड़ा उदार व्यक्ति था। जिन दिनों युवराज फ़ख़रूद्दीन की मृत्यु के पीछे सादी बगदाद आए तो अलाउद्दीन वहाँ के सुल्तान अबाक़ ख़ांका वजीर था। एक दिन मार्ग में सादी से उसकी भेंट हो गयी। उसने बड़ा आदर-सत्कार किया। उस समय से अन्त तक वह बड़ी भक्ति से सादी की सेवा करता रहा। उसके दिये हुए धन से सादी अपने ब्याह के लिए थोड़ा-सा लेकर शेष दीनों को दान कर दिया करते थे। एक बार ऐसा हुआ कि अलाउद्दीन ने अपने एक गुलाम के हाथ सादी के पास पाँच सौ दीनार भेजे। गुलाम जानता था कि शेख़ साहब कभी किसी चीज़ को गिनते तो हैं नहीं, अतएव उसने धूर्तता से एक सौ पचास दीनार निकाल लिये। सादी ने धन्यवाद में एक कविता लिखकर भेजी, उसमें तीन सौ पचास दीनारों का ही जिक्र था। अलाउद्दीन बहुत लज्जित हुआ, गुलाम को दंड दिया और अपने एक मित्र को जो शीराज़ में

किसी उच्च पद पर नियुक्त था लिख भेजा कि सादी को दस हजार दीनार दे दो। लेकिन इस पत्र के पहुँचने से दो दिन पहले ही उनके यह मित्र परलोक सिधार चुके थे, रुपये कौन देता? इसके बाद अलाउद्दीन ने अपने एक परम विश्वस्त मनुष्य के हाथ सादी के पास पचास हज़ार दीनार भेजे। इस धन से सादी ने एक धर्मशाला बनवा दी। मरते समय तक शेख़ शादी इसी धर्मशाला में निवास करते रहे। उसी में अब उनकी समाधि है।

5. चरित्र

सादी उन कवियों में हैं – जिनके चरित्र का प्रतिबिंब उनके काव्य रूपी दर्पण में स्पष्ट दिखाई देता हैं। हृदय से निकलते थे और यही कारण है कि उनमें इतनी प्रबल शक्ति भरी हुई है। सैकड़ों अन्य उपदेशकों की भाँति वह दूसरों को परमार्थ सिखाकर आप स्वार्थ पर जान न देते थे। दूसरों को न्याय, धर्म और कर्तव्य पालन की शिक्षा देकर आप विलासिता में लिप्त न रहते थे। उनकी वृत्ति स्वभावतः सात्विक थी। उनका मन कभी वासनाओं से विचलित नहीं हुआ। अन्य कवियों की भाँति उन्होंने किसी राज-दरबार का आश्रय नहीं लिया। लोभ को कभी अपने पास नहीं आने दिया। यश

और ऐश्वर्य दोनों ही सत्कर्म के फल हैं। यश दैविक है, ऐश्वर्य मानुषिक। सादी ने दैविक फल पर संतोष किया, मानुषिक के लिए हाथ नहीं फैलाया। धन की देवी जो बलिदान चाहती है वह देने की सामर्थ्य सादी में नहीं थी। वह अपनी आत्मा का अल्पांश भी उसे भेंट न कर सकते थे। यही उनकी निर्भीकता का अवलंब है। राजाओं को उपदेश देना सांप के बिल में उंगली डालने के समान है। यहाँ एक पाँव अगर फूलों पर रहता है तो दूसरा काँटों में। विशेषकर सादी के समय में तो राजनीति का उपदेश और भी जोखिम का काम था। ईरान और बग़दाद दोनों ही देश में अरबों का पतन हो रहा था, तातारी बादशाह प्रजा को पैरों तले कुचले डालते थे। लेकिन सादी ने उस कठिन समय में भी अपनी टेक न छोड़ी। जब वह शीराज़ से दूसरी बार बग़दाद गये तो वहाँ हलाकू ख़ां मुग़ल का बेटा अबाक़ खाँ बादशाह था। हलाकू ख़ाँ के घोर अत्याचार चंगेज़ और तैमूर की पैशाचिक क्रूरताओं को भी लज्जित करते थे। अबाक़ खाँ यद्यपि ऐसा अत्याचारी न था तथापि उसके भय से प्रजा थर-थर काँपती थी। उसके दो प्रधान कर्मचारी सादी के भक्त थे। एक दिन सादी बाज़ार में घूम रहे थे कि बादशाह की सवारी धूमधाम से उनके सामने से निकली। उनके दोनों कर्मचारी उनके साथ थे। उन्होंने सादी को देखा तो घोड़ों से उतर पड़े और उनका बड़ा सत्कार किया। बादशाह को अपने वज़ीरों की यह श्रद्धा देखकर बड़ा कौतूहल

हुआ। उसने पूछा यह कौन आदमी है। वज़ीरों ने सादी का नाम और गुण बताया। बादशाह के हृदय में भी सादी की परीक्षा करने का विचार पैदा हुआ। बोला, कुछ उपदेश मुझे भी कीजिये। संभवतः उसने सादी से अपनी प्रशंसा करानी चाही होगी। लेकिन सादी ने निर्भयता से यह उद्देश्यपूर्ण शेर पढ़े

शहे कि पासे रऐयत निगाह मीदारद,
हलाल बाद ख़िराज़ कि मुज्दे चौपानीस्त।
बगर न राइये ख़ल्कस्त ज़हरमारश बाद;
कि हरचे मी ख़ुरद अज़ जजियए मुसलमानीस्त।

भावार्थ – बादशाह जो प्रजा-पालन का ध्यान रखता है। एक चरवाहे के समान है। यह प्रजा से जो कर लेता है वह उसकी मजदूरी है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो हराम का धन खाता है!

अबाक़ खाँ यह उपदेश सुनकर चकित हो गया। सादी की निर्भयता ने उसे भी सादी का भक्त बना दिया। उसने सादी को बड़े सम्मान के साथ विदा किया।

सादी में आत्मगौरव की मात्रा भी कम न थी। वह आन पर जान देने वाले मनुष्यों में थे। नीचता से उन्हें घृणा थी। एक बार इस्कन दरिया में बड़ा

अकाल पड़ा। लोग इधर-उधर भागने लगे। वहाँ एक बड़ा संपत्तिशाली ख़ोजा था। वह ग़रीबों को खाना खिलाता और अम्यागतों की अच्छी सेवा-सम्मान करता। सादी भी वहीं थे। लोगों ने कहा, आप भी उसी ख़ोजे के मेहमान बन जाइए। इस पर सादी ने उत्तर दिया शेर कभी कुत्तों का जूठा नहीं खाता चाहे अपनी माँद में भूखों मर भले ही जाय।

सादी को धर्मध्वजीपन से बड़ी चिढ़ थी। वह प्रजा को मूर्ख और स्वार्थी मुल्लाओं के फंदे में पड़ते देखकर जल जाते थे। उन्होंने काशी, मथुरा, वृन्दावन या प्रयाग के पाखंडी पंडों की पोप-लीलायें देखी होतीं तो इस विषय में उनकी लेखनी और भी तीव्र हो जाती। छत्रधारी हाथी पर बैठने वाले महंत, पालकियों में चंवर डुलाने वाले पुजारी, घंटों तिलक मुद्रा में समय ख़र्च करने वाले पंडित और राजा-रईसों के दरबार में खिलौना बनने वाले महात्मा उनकी समालोचना को कितनी रोचक और हृदयग्राही बना देते? एक बार लेखक ने दो जटाधारी साधुओं को रेलगाड़ी में बैठे देखा। दोनों महात्मा एक पूरे कम्पार्टमेंट में बैठे हुए थे और किसी को भीतर न घुसने देते थे। मिले हुए कम्पार्टमेंटों में इतनी भीड़ थी कि आदमियों को खड़े होने की जगह भी न मिलती थी। एक वृद्ध यात्री खड़े-खड़े थककर धीरे से साधुओं के डब्बे में जा बैठा। फिर क्या था। साधुओं की योग शक्ति ने प्रचंड रूप धारण किया, बुड्ढे को डाँट बताई और ज्योंही स्टेशन आया,

स्टेशन-मास्टर के पास जाकर फरियाद की कि बाबा, यह बूढ़ा यात्री साधुओं को बैठने नहीं देता। मास्टर साहब ने साधुओं की डिगरी कर दी। भस्म और जटा की यह चमत्कारिक शक्ति देखकर सारे यात्री रोब में आ गये और फिर किसी को उनकी उस गाड़ी को अपवित्र करने का साहस नहीं हुआ। इसी तरह रीवाँ में लेखक की मुलाकात एक संन्यासी से हुई। वह स्वयं अपने गेरुवें बाने पर लज्जित थे। लेखक ने कहा, आप कोई और उद्यम क्यों नहीं करते? बोले, अब उद्यम करने की सामर्थ्य नहीं और करू भी तो क्या। मेहनत-मजूरी होती नहीं, विद्या कुछ पढ़ी नहीं, यह जीवन तो इसी भाँति कटेगा। हाँ, ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि दूसरे जन्म में मुझे सद्बुद्धि दे और इस पाखंड में न फँसावे। सादी ने ऐसी हज़ारों घटनायें देखी होंगी, और कोई आश्चर्य नहीं कि इन्हीं बातों से उनका दयालु हृदय भी पाखंडियों के प्रति ऐसा कठोर हो गया हो।

सादी मुसलमानी धर्मशास्त्र के पूर्ण पंडित थे। लेकिन दर्शन में उनकी गति बहुत कम थी। उनकी नीति शिक्षा स्वर्ग और नर्क, तथा भय पर ही अवलंबित है। उपयोगवाद तथा परमार्थवाद की उनके यहाँ कोई चर्चा नहीं है। सच तो यह है कि सर्वसाधारण में नीति का उपदेश करने के लिए इनकी आवश्यकता ही क्या थी। वह सदाचार जिसकी नींव दर्शन के सिद्धांतों पर होती है धार्मिक सदाचार से कितने ही विषयों में विरोध रखता है और यदि

उसका पूरा-पूरा पालन किया जाय तो संभव है समाज में घोर विप्लव मच जाय।

सादी ने संतोष पर बड़ा जोर दिया है। यह उनकी सदाचार शिक्षा का एकमात्र मूलाधार है। वह स्वयं बड़े संतोषी मनुष्य थे। एक बार उनके पैरों में जूते नहीं थे, रास्ता चलने में कष्ट होता था। आर्थिक दशा भी ऐसी नहीं थी कि जूता मोल लेते। चित्त बहुत खिन्न हो रहा था। इसी विकलता में कूफ़ा की मस्जिद में पहुँचे तो एक आदमी को मस्जिद के द्वार पर बैठे देखा जिसके पाँव ही नहीं थे। उसकी दशा देखकर सादी की आँखें खुल गयीं। मस्जिद से चले आये और ईश्वर को धन्यवाद दिया कि उसने उन्हें पाँव से तो वंचित नहीं किया। ऐसी शिक्षा इस बीसवीं शताब्दी में कुछ अनुपयुक्त-सी प्रतीत होती है। यह असंतोष का समय है। आजकल संतोष और उदासीनता में कोई अंतर नहीं समझा जाता। समाज की उन्नति असंतोष की ऋणी समझी जाती है। लेकिन सादी की संतोष शिक्षा सदुद्योग की उपेक्षा नहीं करती। उनका कथन है कि यद्यपि ईश्वर समस्त सृष्टि की सुधि लेता है लेकिन अपनी जीविका के लिए यत्न करना मनुष्य का परम कर्तव्य है।

यद्यपि सादी के भाषा लालित्य को हिंदी अनुवाद में दर्शाना बहुत ही कठिन है तथापि उनकी कथाओं और वाक्यों से उनकी शैली का भली भाँति परिचय मिलता है। निःसंदेह वह समस्त साहित्य संसार के एक समुज्ज्वल रत्न हैं, और मनुष्य समाज के एक सच्चे पथ प्रदर्शक। जब तक सरल भावों को समझने वाले, और भाषा लालित्य का रसास्वादन करने वाले प्राणी संसार में रहेंगे तब तक सादी का सुयश जीवित रहेगा, और उनकी प्रतिभा का लोग आदर करेंगे।

6. रचनाएँ और उनका महत्त्व

सादी के रचित ग्रंथों की संख्या पंद्रह से अधिक हैं । इनमें चार ग्रंथ केवल गज़लों के हैं । एक दो ग्रंथों में क़सीदे दर्ज हैं जो उन्होंने समय-समय पर बादशाहों या वज़ीरों की प्रशंसा में लिखे थे। इनमें एक अरबी भाषा में है। दो ग्रंथ भक्तिमार्ग पर हैं। उनकी समस्त रचना में मौलिकता और ओज विद्यमान है, कितने ही बड़े-बड़े कवियों ने उन्हें गज़लों का बादशाह माना है। लेकिन सादी की ख्याति और कीर्ति विशेषकर उनकी गुलिस्ताँ और बोस्ताँ पर निर्भर है। सादी ने सदाचार का उपदेश करने के लिए जन्म

लिया था और उनके कसीदों और गज़लों में भी यही गुण प्रधान है। उन्होंने कसीदों में भाटपना नहीं किया है, झूठी तारीफों के पुल नहीं बांधे हैं। गज़लों में भी हिज्र और विशाल, जुल्फ़ और कमर के दुखड़े नहीं रोये हैं। कहीं भी सदाचार को नहीं छोड़ा। गुलिस्ताँ और बोस्ताँ का तो कहना ही क्या है? इनकी तो रचना ही उपदेश के निमित्त हुई थी। इन दोनों ग्रंथों को फ़ारसी साहित्य का सूर्य और चंद्र कहें तो अत्युक्ति न होगी। उपदेश का विषय बहुत शुष्क समझा जाता है, और उपदेशक सदा से अपनी कड़वी, और नीरस बातों के लिये बदनाम रहते आये हैं। नसीहत किसी को अच्छी नहीं लगती। इसीलिए विद्वानों ने इस कड़वी औषधि को भाँति-भाँति के मीठे शर्बतों के साथ पिलाने की चेष्टा की है। कोई चील-कौवे की कहानियाँ गढ़ता है, कोई कल्पित कथायें नमक-मिर्च लगाकर बखानता है। लेकिन सादी ने इस दुस्तर कार्य को ऐसी विलक्षण कुशलता और बुद्धिमत्त से पूरा किया है कि उनका उपदेश काव्य से भी अधिक सरस और सुबोध हो गया है। ऐसा चतुर उपदेशक कदाचित ही किसी दूसरे देश में उत्पन्न हुआ हो।

सादी का सर्वोत्तम गुण वह वाक्य निपुणता है, जो स्वाभाविक होती है और उद्योग से प्राप्त नहीं हो सकती। वह जिस बात को लेते हैं उसे ऐसे उत्कृष्ट और भावपूर्ण शब्दों में वर्णन करते हैं, जो अन्य किसी के ध्यान में भी नहीं आ सकती। उनमें कटाक्ष करने की शक्ति के साथ-साथ ऐसी मार्मिकता

होती है कि पढ़ने वाले मुग्ध हो जाते हैं। उदाहरण की भाँति इस बात को कि पेट पापी है, इसके कारण मनुष्य को बड़ी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं, वह इस प्रकार वर्णन करते हैं

अगर जौरे शिकम न बूदे, हेच मुर्ग़ दर
दाम न उफतादे, बल्कि सैयाद खुद
दाम न निहारे।

भाव – यदि पेट की चिंता न होती तो कोई चिड़िया जाल में न फँसती, बल्कि कोई बहेलिया जाल ही न बिछाता।

इसी तरह इस बात को कि न्यायाधीश भी रिश्वत से वश में हो जाते हैं, वह यों बयान करते हैं

हमा कसरा दन्दां बतुर्शी कुन्द गरदद,
मगर काजियाँ रा बशीरीनी।

भाव – अन्य मनुष्यों के दाँत खटाई से गट्ठल हो जाते हैं लेकिन न्यायकारियों के मिठाई से।

उनको यह लिखना था कि भीख माँगना जो एक निंद्य कर्म है उसका अपराध केवल फ़कीरों पर ही नहीं बल्कि अमीरों पर भी है, इसको वह इस तरह लिखते हैं

अगर शुमा रा इन्साफ़ बूदे व मारा कनावत,

रस्मे सवाल अज़ जहान बरख़ास्ते।

भाव – यदि तुममें न्याय होता और हममें संतोष, तो संसार में माँगने की प्रथा ही उठ जाती।

इनके प्रधान ग्रंथ गुलिस्ताँ और बोस्ताँ का दूसरा गुण उनकी सरलता है। यद्यपि इनमें एक वाक्य भी नीरस नहीं है, किन्तु भाषा ऐसी मधुर और सरल है कि उस पर आश्चर्य होता है। साधारण लेखक जब सजीली भाषा लिखने की चेष्टा करता है तो उसमें कृत्रिमता आ जाती है लेकिन सादी ने सादगी और सजावट का ऐसा मिश्रण कर दिया है कि आज तक किसी अन्य लेखक को उस शैली के अनुकरण करने का साहस न हुआ, और जिन्होंने साहस किया, उन्हें मुँह की खानी पड़ी। जिस समय गुलिस्ताँ की रचना हुई उस समय फ़ारसी भाषा अपनी बाल्यावस्था में थी। पद्य का तो प्रचार हो गया था लेकिन गद्य का प्रचार केवल बातचीत, हाट-बाज़ार में था। इसलिए सादी को अपना मार्ग आप बनाना था। वह फ़ारसी गद्य के जन्मदाता थे। यह उनकी अद्भुत प्रतिभा है कि आज छः सौ वर्ष के उपरांत भी उनकी भाषा सर्वोत्तम समझी जाती है। उनके पीछे कितनी ही पुस्तकें गद्य में लिखी गयीं, लेकिन उनकी भाषा को पुरानी होने का कलंक लग

गया। गुलिस्ताँ जिसकी रचना आदि में हुई थी आज भी फ़ारसी भाषा का शृंगार समझी जाती है। उसकी भाषा पर समय का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा।

साहित्य संसार और कवि वर्ग में ऐसा बहुत कम देखने में आता है कि एक ही विषय पर गद्य और पद्य के दो ग्रथों में गद्य रचना अधिक श्रेष्ठ हो। किन्तु सादी ने यही कर दिखाया है। गुलिस्ताँ और बोस्ताँ दोनों में नीति का विषय लिया गया है। लेकिन जो आदर और प्रचार गुलिस्ताँ का है वह बोस्ताँ का नहीं। बोस्ताँ के जोड़ की कई किताबें फ़ारसी भाषा में वर्तमान हैं। मसनवी (भक्ति के विषय में मौलाना जलालुद्दीन का महाकाव्य), सिकन्दरनामा (सिकन्दर बादशाह के चरित्र पर निज़ामी का काव्य) और शाहनामा (फ़िरदौसी का अपूर्व काव्य, ईरान देश के बादशाहों के विषय में, फ़ारसी का महाभारत) यह तीनों ग्रंथ उच्चकोटि के हैं और उनमें यद्यपि शब्द योजना, काव्य-सौदर्य, अलंकार और वर्णन शक्ति बोस्ताँ से अधिक है तथापि उसकी सरलता, और उसकी गुप्त चुटकियाँ और युक्तियाँ उनमें नहीं है। लेकिन गुलिस्ताँ के जोड़ का कोई ग्रंथ फ़ारसी भाषा में है ही नहीं। उसका विषय नया नहीं है। उसके बाद से नीति पर फ़ारसी में सैकड़ों ही किताबें लिखी जा चुकी हैं। उसमें जो कुछ चमत्कार है वह सादी के भाषा लालित्य और वाक्य चातुरी का है। उसमें बहुत-सी कथायें और घटनायें स्वयं लेखक ने

अनुभव की हैं, इसलिए उनमें ऐसी सजीवता और प्रभावोत्पादकता का संचार हो गया है जो केवल अनुभव से ही हो सकता है। सादी पहले एक बहुत साधारण कथा छेड़ते हैं लेकिन अंत में एक ऐसी चुटीली और मर्मभेदी बात कह देते हैं कि जिससे सारी कथा अलंकृत हो जाती है। यूरोप के समालोचकों ने सादी की तुलना 'होरेस' (यूनान का सर्वश्रेष्ठ कवि) से की है। अंग्रेज विद्वान ने उन्हें एशिया के शेक्सपियर की पदवी दी है इससे विदित होता है कि यूरोप में भी सादी का कितना आदर है। गुलिस्ताँ के लैटिन, फ्रेंच, जर्मन, डच, अंग्रेजी, तुर्की आदि भाषाओं में एक नहीं कई अनुवाद हैं। भारतीय भाषाओं में उर्दू, गुजराती, बंगला में उसका अनुवाद हो चुका है। हिंदी भाषा में भी महाशय मेहरचन्द दास का किया हुआ गुलिस्ताँ का गद्य-पद्यमय अनुवाद 1888 में प्रकाशित हो चुका है। संसार में ऐसे थोड़े ही ग्रंथ हैं जिनका इतना आदर हुआ हो।

7. गुलिस्ताँ

हम गुलिस्ताँ की कुछ कथाएँ देते हैं जिनसे पाठकों को भी सादी के लेखन कौशल का परिचय दे सकें।गुलिस्ताँ में आठ प्रकरण हैं। प्रत्येक प्रकरण में नीति और सदाचार के भिन्न-भिन्न सिद्धांतों का वर्णन किया गया है।

प्रथम प्रकरण में बादशाहों का आचार, व्यवहार, और राजनीति के उपदेश दिये गये हैं। सादी ने राजाओं के लिए निम्नलिखित बातें बहुत आवश्यक और ध्यान देने योग्य बतलाई हैं –

प्रजा पर कभी स्वयं अत्याचार न करे न अपने कर्मचारियों को करने दे।

किसी बात का अभिमान न करे और संसार के वैभव को नश्वर समझता रहे।

प्रजा के धन को अपने भोग-विलास में न उड़ाकर उन्हीं के आराम में खर्च करे।

गुलिस्ताँ की कथायें

मैं दमिश्क में एक औलिया की कब्र पर बैठा हुआ था कि अरब देश का एक अत्याचारी बादशाह वहाँ पूजा करने आया। नमाज़ पढ़ने के पश्चात् वह

मुझसे बोला कि मैं आजकल एक बलवान शत्रु के हाथों तंग आ गया हूँ। आप मेरे लिए दुआ कीजिये। मैंने कहा कि शत्रु के पंजे से बचने के लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि अपनी दीन प्रजा पर दया कीजिये।

एक अत्याचारी बादशाह ने किसी साधु से पूछा कि मेरे लिए कौन-सी उपासना उत्तम है। उत्तर मिला कि तुम्हारे लिए दोपहर तक सोना सब उपासनाओं से उत्तम है। जिसमें उतनी देर तुम किसी को सता न सको।

एक दिन ख़लीफ़ा हारूँ रशीद का एक शाहज़ादा क्रोध से भरा हुआ अपने पिता के पास आकर बोला, मुझे अमुक सिपाही के लड़के ने गाली दी है। बादशाह ने मन्त्रियों से पूछा क्या होना चाहिए। किसी ने कहा, उसे कैद कर दीजिये। कोई बोला, जान से मरवा डालिये। इस पर बादशाह ने शाहज़ादे से कहा, बेटा, अच्छा तो यह है कि उसे क्षमा करो। यदि इतने उदार नहीं हो सकते हो तो उसे भी गाली दे लो।

एक साधु संसार से विरक्त होकर वन में रहने लगा। एक दिन राजा की सवारी उधर से निकली। साधु ने कुछ ध्यान न दिया। तब मंत्री ने जाकर उससे कहा, साधुजी, राजा तुम्हारे सामने से निकले और तुमने उनका कुछ सम्मान न किया। साधु ने कहा, भगवन्, राजा से कहिए कि नमस्कार-प्रणाम

की आशा उससे रक्खें जो उनसे कुछ चाहता हो। दूसरे राजा प्रजा की रक्षा के लिए है, न कि प्रजा राजा की बंदगी के लिए।

एक बार न्यायशील नौशेरवाँ जंगल में शिकार खेलने गया। वहाँ भोजन बनाने के लिए नमक की ज़रूरत हुई। नौकर को भेजा कि जाकर पास वाले गाँव से नमक ले आ। लेकिन बिना दाम दिये मत लाना। नहीं गाँव ही उजड़ जायगा। नौकर ने कहा, तनिक-सा नमक लेने से गाँव कैसे उजड़ जायेगा? नौशेरवाँ ने उत्तर दिया, अगर राजा प्रजा के बाग़ से एक सेब खा ले तो नौकर लोग उस वृक्ष की जड़ तक खोद खाते हैं।

एक बादशाह बीमार था। उसके जीवन की कोई आशा न थी। वैद्यों ने जवाब दे दिया था। इन्हीं दिनों एक सवार ने आकर उसे किसी किश्ने के जीतने का सुख-संवाद सुनाया। बादशाह ने लंबी सांस लेकर कहा, यह ख़बर मेरे लिए नहीं, मेरे उत्तराधिकारियों के लिए सुखदायक हो सकती है।

एक बादशाह किसी असाध्य रोग से पीड़ित था। हकीमों ने बहुत कुछ यत्न किया, पर कोई असर न हुआ। अंत में उन्होंने बादशाह को मनुष्य का गुर्दा सेवन कराने का विचार किया। वह मनुष्य किस रूप-रंग का हो इसकी विवेचना भी कर दी। बहुत खोजने पर एक ज़मीनदार के पुत्र में यह सब गुण पाये गये। उसके माता-पिता रुपया लेकर लड़के का वध कराने पर राज़ी हो

गये। काज़ी साहब ने भी व्यवस्था दे दी कि बादशाह की प्राणरक्षा के लिए यह हत्या न्याय विरुद्ध नहीं है। अन्त में जब जल्लाद उसे मारने खड़ा हुआ तो लड़का आकाश की ओर देखकर हँस पड़ा। बादशाह ने विस्मित होकर हँसी का कारण पूछा। लड़के ने कहा, मैं अपने भाग्य की विचित्रता पर हँसता हूँ। माता-पिता के प्रेम, काज़ी के न्याय, और बादशाह के प्रजापालन, सबने मेरी रक्षा से हाथ खींच लिया, अब केवल ईश्वर ही मेरा सहायक है। बादशाह के हृदय में दया उत्पन्न हुई, बालक को गोद में ले लिया और बहुत-सा धन देकर विदा किया।

किसी बादशाह के पास एक परोपकारी मंत्री था। दैवयोग से एक बार बादशाह ने किसी बात पर नाराज़ होकर उसे जेलख़ाने भेज दिया। पर जेल में भी उसके कितने ही मित्र थे जो पहले की भाँति ही उसका मान-सम्मान करते रहे। उधर एक दूसरे रईस को इस घटना की खबर मिली तो उसने मंत्री के नाम गुप्त रीति से पत्र लिखा कि जब वहाँ आपका इतना अनादर हो रहा है तो क्यों यह कष्ट झेल रहे हैं? यदि आप यहाँ चले आयें तो आपका यथोचित सम्मान किया जायगा और हम लोग इसे अपना धन्य भाग समझेंगे। मंत्री ने बहुत संक्षिप्त उत्तर लिख भेजा। इतने में किसी ने बादशाह से जाकर कहा, देखिये मंत्री जी इतने पर भी अपनी कुटिलता से बाज नहीं आते, अन्य देशीय रईसों से लिखा-पढ़ी कर रहे हैं। बादशाह ने गुप्तचर के

पकड़े जाने का हुक्म दिया। पत्र देखा गया तो लिखा था, मैं इस आदर के लिए आपका बहुत अनुग्रहीत हूँ, लेकिन जिस रियासत का वर्षों तक नमक खा चुका हूँ उससे थोड़ी-सी ताड़ना के कारण विमुख नहीं हो सकता। आप मुझे क्षमा करें। बादशाह यह पत्र देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और मंत्री को कारागार से निकालकर फिर पुराने पद पर नियुक्त कर दिया और अपनी निर्दयता पर बहुत लज्जित हुआ।

एक पहलवान अपने एक शिष्य से विशेष प्रीति रखता था। उसने उसे एक पेंच के सिवाय अपने और सब पेंचों का अभ्यास करा दिया। इससे शिष्य को अहंकार हो गया। उसने बादशाह से जाकर कहा, मेरे गुरुजी अब केवल नाम के गुरु हैं। मल्लयुद्ध में वह मेरा सामना नहीं कर सकते। बादशाह ने युवक का यह घमंड तोड़ने का निश्चय किया। एक दंगल कराने का हुक्म दिया जिसमें गुरु और शिष्य अपना-अपना पराक्रम दिखायें। सहस्रों मनुष्य एकत्र हुए। कुश्ती होने लगी। शिष्य ने गुरुजी के सब पेंच काट दिये, पर अन्तिम पेंच की काट न जानता था, परास्त हो गया। बादशाह ने गुरु को इनाम दिया और युवक को बहुत धिक्कारा कि इसी बल-बूते पर तू इतनी डींग मारता था। शिष्य ने कहा, दीन बंधु, गुरुजी ने यह पेंच मुझसे छिपा रखा था। गुरुजी ने कहा, हाँ, इसी दिन के लिए छिपाया था। क्योंकि चतुर

मनुष्यों की कहावत है कि मित्र को इतना सबल न बना देना चाहिये कि वह शत्रु होकर हानि पहुँचा सके।

दूसरा प्रकरण

दूसरे प्रकरण में सादी ने पाखंडी साधुओं, मौलवियों और फ़कीरों को शिक्षा दी है, जिन्हें उस प्राचीन काल में भी इसकी कुछ कम आवश्यकता न थी। सादी को पंडितों, मौलवी-मुल्लाओं के साथ रहने के बहुत अवसर मिले थे। अतएव वह उनके रंग-ढंग को भली-भाँति जानते थे। इन उपदेशों में बार-बार समझाया है कि मौलवियों को संतोष रखना चाहिए। उन्हें राजा रईसों की खुशामद करने की जरूरत नहीं। गेरुवे बाने की आड़ में स्वार्थ सिद्धि को वह अत्यंत घृणा की दृष्टि से देखते थे। उनके कथनानुसार किसी बने हुए साधु से भोग-विलास मेँफँसा हुआ मनुष्य अच्छा है, क्योंकि वह किसी को धोखा तो देना नहीं चाहता।

मुझे याद है कि एक बार जब मैं बाल्यावस्था में सारी रात कुरान पढ़ता रहा तो कई आदमी मेरे पास खर्राटे ले रहे थे। मैंने अपने पूज्य पिता से कहा, इन सोने वालों को देखिये, नमाज़ पढ़ना तो दूर रहा कोई सिर भी नहीं

उठाता। पिताजी ने उत्तर दिया, बेटा, तू भी सो जाता तो अच्छा था क्योंकि इस छिद्रान्वेषण से तो बच जाता।

किसी देश में एक भिक्षुक ने बहुत-सा धन जमा कर रक्खा था। वहाँ के बादशाह ने उसे बुलाकर कहा, सुना है तुम्हारे पास बड़ी सम्पत्ति है। मुझे आजकल धन की बड़ी आवश्यकता है। यदि उसमें से कुछ दे दो तो कोष में रुपये आते ही मैं तुम्हें चुका दूँगा। फ़कीर ने कहा, जहाँपनाह, मुझ जैसे भिखारी का धन आपके काम का नहीं है क्योंकि मैंने माँग-माँगकर कौड़ी-कौड़ी बटोरी है। बादशाह ने कहा, इसकी कुछ चिंता नहीं, मैं यह रुपये काफिरों, अधर्मियों को ही दूँगा। जैसा धन है वैसा ही उपयोग होगा।

एक वृद्ध पुरुष ने एक युवती कन्या से विवाह किया। जिस कमरे में उसके साथ रहता उसे फूलों से खूब सजाता। उसके साथ एकांत में बैठा हुआ उसकी सुंदरता का आनंद उठाया करता। रात भर जाग-जागकर मनोहर कहानियाँ कहा करता कि कदाचित उसके हृदय में कुछ प्रेम उत्पन्न हो जाय। एक दिन उससे बोला, तेरा नसीब अच्छा था कि तेरा विवाह मेरे जैसे बूढ़े से हुआ जिसने बहुत ज़माना देखा है, सुख-दुःख का बहुत अनुभव कर चुका है। जो मित्र धर्म का पालन करना जानता है; जो मृदुभाषी, प्रसन्नचित्त और शीलवान है। तू किसी अभिमानी युवक के पाले पड़ी होती, जो रात-

दिन सैर-सपाटे किया करता, अपने ही बनाव सिंगार में भूला रहता, नित्य नये प्रेम की खोज में रहता, तो तुझसे रोते भी न बनता। युवक लोग सुन्दर और रसिक होते हैं किन्तु प्रीतिपालन करना नहीं जानते। बूढ़े ने समझा कि इस भाषण ने कामिनी को मोहित कर लिया, लेकिन अकस्मात युवती ने एक गहरी सांस ली और बोली आपने बहुत ही अच्छी बातें कहीं, लेकिन उनमें से एक भी इतनी नहीं जँचती जितना मेरे दाई का यह वाक्य कि युवती को तीर का घाव उतना दुखदायी नहीं होता जितना वृद्ध मनुष्य का सहवास।

मैं दयारे बक्र में एक वृद्ध धनवान मनुष्य का अतिथि था। उसके एक रूपवान पुत्र था। एक दिन उसने कहा, इस लड़के के सिवा मेरे और कोई संतान नहीं हुई। यहाँ से पास ही एक पवित्र वृक्ष है, लोग वहाँ जाकर मन्नतें मानते हैं। कितने दिनों तक रात-रात भर मैंने उस वृक्ष के नीचे ईश्वर से विनती की, तब मुझे यह पुत्र प्राप्त हुआ। उधर लड़का धीरे-धीरे मित्रों से कह रहा था, यदि मुझे उस वृक्ष का पता होता तो जाकर ईश्वर से पिता की मृत्यु के लिए विनय करता।

मेरे मित्रों में एक युवक बड़ा प्रसन्नचित्त, हंसमुख और रसिक था। शोक उसके हृदय में घुसने भी न पाता था। बहुत दिनों के बाद जब भेंट हुई तो

देखा कि उसके घर में स्त्री और बच्चे हैं। साथ ही न वह पहले की सी मनोरंजकता है न उत्साह। पूछा, क्या हाल है? बोला, जब बच्चों का बाप हो गया तो बच्चों का खिलाड़ीपन कहाँ से लाऊँ? अवस्थानुकूल ही सब बातें शोभा देती हैं।

किसी बादशाह ने एक ईश्वर भक्त से पूछा कि कभी आप मुझे भी तो याद करते होंगे। भक्त ने कहा, हाँ, जब ईश्वर को भूल जाता हूँ तो आप याद आ जाते हैं।

एक बादशाह ने किसी विपत्ति के अवसर पर निश्चय किया कि यदि यह विपत्ति टल जाय तो इतना धन साधु-संतों को दान कर दूँगा। जब उसकी कामना पूरी हो गयी तो उसने अपने नौकर को रुपयों की एक थैली साधुओं को बाँटने के लिए दी। वह नौकर चतुर था। संध्या को वह थैली ज्यों की त्यों दरबार में वापस लाया, बोला दीनबन्धु, मैंने बहुत खोज की किन्तु इन रुपयों का लेने वाला कोई न मिला। बादशाह ने कहा, तुम भी विचित्र आदमी हो, इसी शहर में चार सौ से अधिक साधु होंगे। नौकर ने विनय की, भगवन्, जो संत हैं वह तो इस द्रव्य को छूते नहीं और जो मायासक्त हैं उन्हें मैंने दिया नहीं।

किसी महात्मा से पूछा गया कि दान ग्रहण करना आप उचित समझते हैं या अनुचित? उन्होंने उत्तर दिया, उससे किसी सुकार्य की पूर्ति हो तब तो उचित है और केवल संग्रह और व्यापार के निमित्त अत्यंत अनुचित है।

एक साधु किसी राजा का अतिथि हुआ था। जब भोजन का समय आया तो उसने बहुत अल्प भोजन किया। लेकिन जब नमाज़ का वक़्त आया तो उसने खूब लम्बी नमाज़ पढ़ी। जिसमें राजा के मन में श्रद्धा उत्पन्न हो। वहाँ से विदा होकर घर पर आये तो भूख के मारे बुरा हाल था। आते ही भोजन माँगा। पुत्र ने कहा, पिताजी क्या राजा ने भोजन नहीं दिया। बोले, भोजन तो दिया, किन्तु मैंने स्वयं जान बूझकर कुछ नहीं खाया जिसमें बादशाह को मेरे योगसाधना पर पूरा विश्वास हो जाय। बेटे ने कहा, तो भोजन करके नमाज़ भी फिर से पढ़िये। जिस तरह वहाँ का भोजन आपका पेट नहीं भर सका, वैसे ही वहाँ की नमाज़ भी सिद्ध नहीं हुई।

तीसरा प्रकरण

तीसरे प्रकरण में संतोष की महिमा वर्णन की गयी है। सादी की नीति शिक्षा में संतोष का पद बहुत ऊँचा है। और यथार्थ भी यही है। संतोष सदाचार

का मूलमंत्र है। संतोष रूपी नौका पर बैठकर हम इस भवसागर को निर्विघ्न पार कर सकते हैं।

मिश्र देश में एक धनवान मनुष्य के दो पुत्र थे। एक ने विद्या पढ़ी, दूसरे ने धन संचय किया। एक पंडित हुआ, और दूसरा मिश्र का प्रधान मंत्री कोषाध्यक्ष। इसने अपने विद्वान भ्राता से कहा, देखो मैं राजपद पर पहुँचा और तुम ज्यों के त्यों रह गये। उसने उत्तर दिया, ईश्वर ने मुझ पर विशेष कृपा की है, क्योंकि मुझको विद्या दी जो देव दुर्लभ पदार्थ है और तुमको मिश्र की उस गद्दी का मंत्री बनाया जो फिरऊन (मिश्र का एक अभिमानी बादशाह जिसे मूसा नबी ने नील नदी में डुबा दिया) की थी।

ईरान के बादशाह बहमन के संबंध में कहा जाता है कि उसने अरब के एक हकीम से पूछा कि नित्य कितना भोजन करना चाहिए। हकीम ने उत्तर दिया, 29 तोले। बादशाह बोला, भला, इतने से क्या होगा। उत्तर मिला, इतने आहार से तुम जिन्दा रह सकते हो। इसके उपरान्त जो कुछ खाते हो वह बोझ है जो तुम व्यर्थ अपने ऊपर लादते हो।

एक मनुष्य पर किसी बनिये के कुछ रुपये चढ़ गये थे। वह उससे प्रतिदिन माँगा करता और कड़ी-कड़ी बातें कहता। बेचारा सुन-सुनकर दुःखी होता था, सहने के सिवा कोई दूसरा उपाय न था। एक चतुर ने यह कौतुक

देखकर कहा, इच्छाओं का टालना इतना कठिन नहीं है जितना बनियों का। कसाइयों के तकाजे सहने की अपेक्षा मांस की अभिलाषा में मर जाना कहीं अच्छा है।

एक फ़कीर को कोई काम आ पड़ा। लोगों ने कहा अमुक पुरुष बड़ा दयालु है। यदि उससे जाकर अपनी आवश्यकता कहो तो वह तुम्हें कदापि निराश न करेगा। फ़कीर पूछते-पूछते उस पुरुष के घर पहुँचा। देखा तो वह रोनी सूरत बनाये, क्रोध में भरा बैठा है। उल्टे पाँव लौट आया। लोगों ने पूछा क्यों भाई क्या हुआ? बोले सूरत ही देखकर मन भर गया। यदि माँगना ही पड़े तो किसी प्रसन्नचित्त आदमी से माँगो, मनहूस आदमी से न माँगना ही अच्छा है।

लोगों ने हातिम ताई (उदारता में अरब का हरिश्चन्द्र) से पूछा, क्या तुमने संसार में कोई अपने से अधिक योग्य मनुष्य देखा या सुना है? बोला, हाँ एक दिन मैंने लोगों की बड़ी भारी दावत की। संयोग से उस दिन किसी कार्यवश मुझे जंगल की तरफ जाना पड़ा। एक लकड़हारे को देखा बोझ लिये आ रहा है। उससे पूछा, भाई हातिम के मेहमान क्यों नहीं बन जाते हैं? आज देश भर के आदमी उसके अतिथि हैं। बोला, जो अपनी मेहनत की रोटी खाता है वह हातिम के सामने हाथ क्यों फैलावें?

एक बार युवावस्था में मैंने अपनी माता से कुछ कठोर बातें कह दीं। माता दुःखी होकर एक कोने में जा बैठी और रोकर कहने लगी, बचपन भूल गया, इसीलिये अब मुँह से ऐसी बातें निकलती हैं।

एक बूढ़े से लोगों ने पूछा, विवाह क्यों नहीं करते? वह बोला, वृद्धा स्त्रियों से मैं विवाह नहीं करना चाहता। लोगों ने कहा, तो किसी युवती से कर लो। बोला, जब मैं बूढ़ा होकर बूढ़ी स्त्रियों से भागता हूँ तो युवती होकर बूढ़े मनुष्य को कैसे चाहेंगी?

चौथा प्रकरण

चौथा प्रकरण बहुत छोटा है और उसमें मितभाषी होने का जो उपदेश किया गया है उसकी सभी बातों से आजकल के शिक्षित सहमत न होंगे, जिनका सिद्धान्त ही है कि अपनी राई भर बुद्धि को पर्वत बनाकर दिखाया जाय। आजकल विनय अयोग्यता की द्योतक समझी जाती है और वही मनुष्य चलते-पुर्जे और कार्यकुशल समझे जाते हैं जो अपनी बुद्धि और चतुराई की महिमा गान करने में कभी नहीं चूकते। किसी यूरोपीय सज्जन ने यह लिखने में भी संकोच नहीं किया कि चुप रहने से मूर्खता प्रकट होती है। लेकिन इसमें किसी को शंका नहीं हो सकती कि मितभाषी होना भी समाज

की उन्नति के लिए उपयोगी है। ऐसे अवसर भी आ जाते हैं जब हमको अपनी वाचालता पर पछताना पड़ता है। इस विषय में सादी ने कई मर्मपूर्ण उपदेश दिये हैं। जिन पर चलने से हमको विशेष लाभ हो सकता है।

एक चतुर युवक का नियम था कि बुद्धिमानों की सभा में बैठता तो मौन धारण कर लेता। लोगों ने उससे कहा, तुम भी कभी-कभी किसी विषय पर कुछ बोला करो। उसने कहा, कहीं ऐसा न हो कि लोग मुझसे ऐसी बात पूछ बैठें जो मुझे आती ही न हो और मुझे लज्जित होना पड़े।

एक विद्वान् ने कहा है कि यदि संसार में कोई ऐसा है जो अपनी मूर्खता को स्वीकार करता हो तो वही मनुष्य है जो किसी आदमी की बात समाप्त होने से पहले ही बोल उठता है।

हसन नाम के एक मंत्री पर बादशाह महमूद गज़नी का बड़ा विश्वास था। एक दिन उससे अन्य कर्मचारियों ने पूछा कि आज बादशाह ने अमुक विषय के संबंध में तुमसे क्या कहा? हसन ने कहा, जो तुमसे कहा, वही हमसे भी कहा। बोले, जो बातें तुमसे होती हैं वह हमसे नहीं करते। उत्तर दिया, जब बादशाह मुझ पर विश्वास करके कोई भेद की बातें कहते हैं तो मुझसे क्यों पूछते हो।

किसी मस्जिद में अवैतनिक मौलवी ऐसी बुरी तरह नमाज, पढ़ता कि सुनने वालों को घृणा होती। मस्जिद का स्वामी दयालु था। वह मौलवी का दिल दुःखाना नहीं चाहता था। मौलवी से कहा कि इस मस्जिद के कई पुराने मुल्ला हैं जिन्हें मैं पाँच रुपये मासिक देता हूँ। तुम्हें दस रुपये दूँगा, लेकिन किसी दूसरी मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़ आया करो। मौलवी ने इसे स्वीकार कर लिया। लेकिन थोड़े ही दिनों में वह फिर स्वामी के पास आया और बोला, आपने तो मुझे दस रुपये देकर यहाँ से निकाला, अब जहाँ हूँ वहाँ के लोग मुझे मस्जिद से जाने के लिए बीस रुपये दे रहे हैं। स्वामी खूब हँसा और बोला, पचास दीनार लिये बिना पिंड मत छोड़ना।

पाँचवाँ और छठवाँ प्रकरण

पाँचवाँ और छठवाँ प्रकरण जीवन की ही मुख्य अवस्थाओं से संबंध रखते हैं। एक में युवावस्था, दूसरे में वृद्धावस्था का वर्णन है। युवावस्था में हमारी मनोवृत्तियाँ कैसी होती हैं, हमारे कर्तव्य क्या होते हैं, हम वासनाओं में किस प्रकार लिप्त हो जाते हैं, बुढ़ापे में हमें क्या-क्या अनुभव होते हैं, मन में क्या अभिलाषायें रहती हैं, हमारा क्या कर्तव्य होना चाहिए। इन सब विषयों का सादी ने इस तरह वर्णन किया है मानो वह भी सदाचार के अंग हैं। इसमें

कितनी ही कथायें ऐसी हैं जिनसे मनोरंजन के सिवा कोई नतीजा नहीं निकलता, वरन् कुछ कथायें ऐसी भी हैं जिनको गुलिस्ताँ जैसे ग्रंथ में स्थान न मिलना चाहिए था। विशेषकर युवावस्था का वर्णन करते हुए तो ऐसा मालूम होता है मानो सादी को जवानी का नशा चढ़ गया था।

सातवाँ प्रकरण

सातवाँ प्रकरण शिक्षा से संबंध रखता है। सादी ने शिक्षकों के दोष और गुण, शिष्य और गुरु के पारस्परिक व्यवहार और शिक्षा के फल और विफल का वर्णन किया है। उनका सिद्धान्त था कि शिक्षा चाहे कितनी भी उत्तम हो मानव स्वभाव को नहीं बदल सकती और शिक्षक चाहे कितना ही विद्वान और सच्चरित्र क्यों न हो कठोरता के बिना अपने कार्य में सफल नहीं हो सकता। यद्यपि आजकल यह सिद्धांत निर्भ्रान्त नहीं माने जा सकते तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें कुछ भी तत्त्व नहीं है। कोई शिक्षा पद्धति अब तक ऐसी नहीं निकलती है जो दंड का निषेध करती हो, हाँ कोई शारीरिक दंड के पक्ष में है, कोई मानसिक।

एक विद्वान किसी बादशाह के लड़के को पढ़ाता था। वह उसे बहुत मारता और डाँटता था। राजपुत्र ने एक दिन अपने पिता से जाकर अध्यापक की

शिकायत की। बादशाह को भी क्रोध आया। अध्यापक को बुलाकर पूछा, आप मेरे लड़के को इतना क्यों मारते हैं? इतनी निर्दयता आप अन्य लड़कों के साथ नहीं करते? अध्यापक ने उत्तर दिया, महाराज, राजपुत्र में नम्रता और सदाचार की विशेष आवश्यकता है क्योंकि बादशाह लोग जो कुछ कहते या करते हैं वह प्रत्येक मनुष्य की जिह्वा पर रहता है पर जिसे बचपन में सचरित्रता की शिक्षा कठोरतापूर्वक नहीं मिलती उसमें बड़े होने पर कोई अच्छा गुण नहीं आ सकता। हरी लकड़ी को चाहे जितनी झुका लो लेकिन सूख जाने पर वह नहीं मुड़ सकती। मैंने अफ्रीका देश में एक मौलवी को देखा। वह अत्यंत कुरूप, कठोर और कटुभाषी था। लड़कों को पढ़ाता कम और मारता. जियादा। लोगों ने उसे निकालकर एक धार्मिक, नम्र और सहनशील मौलवी रक्खा। यह हज़रत लड़कों से बहुत प्रेम से बोलते और कभी उनकी तरफ कड़ी आँख से भी न देखते। लड़के उनका यह स्वभाव देखकर ढीठ हो गये। आपस में लड़ाई दंगा मचाते और लिखने की तख्तियाँ लड़ाया करते। जब मैं दूसरी बार फिर वहाँ गया तो मैंने देखा कि वही पहले वाला मौलवी बालकों को पढ़ा रहा है। पूछने पर विदित हुआ कि दूसरे मौलवी की नम्रता से उकता जाने पर लोग पहले मौलवी को मनाकर लाये थे।

एक बार मैं बलख़ से कुछ यात्रियों के साथ आ रहा था। हमारे साथ एक बहुत बलवान नवयुवक था जो डींग मारता चला आता था कि मैंने यह किया और वह किया। निदान हमको कई डाकुओं ने घेर लिया। मैंने पहलवान से कहा, अब क्यों खड़े हो, कुछ अपना पराक्रम दिखाओ। लेकिन लुटेरों को देखते ही उस मनुष्य के होश उड़ गये। मुख फीका पड़ गया। तीर-कमान हाथ से छूटकर गिर पड़ा और वह थरथर काँपने लगा। जब उसकी यह दशा देखी तो अपना असबाब वहीं छोड़कर हम लोग भाग खड़े हुए। यों किसी तरह प्राण बचे। जिसे युद्ध का अनुभव हो वही समर में अड़ सकता है। इसके लिए बल से अधिक साहस की ज़रूरत है।

आठवाँ प्रकरण

आठवें प्रकरण में सादी ने सदाचार और सद्व्यवहार के नियम लिखे हैं। कथाओं का आश्रय न लेकर खुले-खुले उपदेश किये हैं। इसलिए सामान्य रीति से यह प्रकरण विशेष रोचक न हो सकता था, किन्तु इस कमी को सादी ने रचना सौंदर्य से पूरा किया है। छोटे-वाक्यों में सूत्रों की भाँति अर्थ भरा हुआ है। मानो यह प्रकरण सादी के उपदेशों का निचोड़ है। यह वह

उपवन है जिसमें राजनीति, सदाचार, मनोविज्ञान, समाजनीति, सभाचातुरी आदि रंग-बिरंगे पुरुष लहलहा रहे हैं। इन फूलों में छिपे हुए कांटे भी हैं, जिनमें वह अद्भुत गुण है कि वह वहीं चुभते हैं जहाँ चुभने चाहिये।

यदि कोई निर्बल शत्रु तुम्हारे साथ मित्रता करे तो तुमको उससे अधिक सचेत रहना चाहिए। जब मित्र की सच्चाई का ही भरोसा नहीं तो शत्रुओं की खुशामद का क्या विश्वास!

यदि किन्हीं दो दुश्मनों के बीच में कोई बात कहनी हो तो इस भाँति कहो कि अगर वे फिर मित्र हो जायँ तो तुम्हें लज्जित न होना पड़े।

जो मनुष्य अपने मित्र के शत्रुओं से मित्रता करता है। वह अपने मित्र का शत्रु है।

जब तक धन से काम निकले तब तक जान को जोखिम में न डालो। जब कोई उपाय न रहे तो म्यान से तलवार खींचो।

शत्रु की सलाह के विरुद्ध काम करना ही बुद्धिमानी है अगर वह तुम्हें तीर के समान सीधी राह दिखावे तो भी उसे छोड़ दो और उलटी (उसके विरुद्ध) राह जाओ।

न तो इतने कठोर बनो कि लोग तुमसे डरने लगें और न इतने कोमल कि लोग सिर चढ़ें।

दो मनुष्य राज्य और धर्म के शत्रु हैं, निर्दयी राजा और मूर्ख साधु।

राजा को उचित है कि अपने शत्रुओं पर इतना क्रोध न करे कि जिससे मित्रों के मन में भी खटका हो जाय।

जब शत्रु की कोई चाल काम नहीं करती तब वह मित्रता पैदा करता है; मित्रता की आड़ में वह उन सब कामों को कर सकता है जो दुश्मन रहकर न कर सकता।

साँप के सिर को अपने बैरी के हाथ से कुचलवाओ या तो साँप ही मरेगा या दुश्मन ही से गला छूटेगा।

जब तक तुम्हें पूर्ण विश्वास न हो कि तुम्हारी बात पसंद आवेगी तब तक बादशाह के सामने किसी की निंदा मत करो; अन्यथा तुम्हें स्वयं हानि उठानी पड़ेगी।

जो व्यक्ति किसी घमंडी आदमी को उपदेश करता है, वह खुद नसीहत का मुहताज है।

जो मनुष्य सामर्थ्यवान होकर भी भलाई नहीं करता उसे सामर्थ्यहीन होने पर दुःख भोगना पड़ेगा। अत्याचारी का विपद में कोई साथी नहीं होता।

किसी के छिपे हुए ऐब मत खोलो, इससे तुम्हारा भी विश्वास उठ जायगा।

विद्या पढ़कर उसका अनुशीलन न करना ज़मीन जोतकर बीज न डालने के समान है।

जिसकी भुजाओं में बल नहीं है, यदि वह लोहे की कलाई वाले से पंजा ले तो यह उसकी मूर्खता है।

दुर्जन लोग सज्जनों को उसी तरह नहीं देख सकते जिस तरह बाज़ारी कुत्ते शिकारी कुत्तों को देखकर दूर से गुर्राते हैं; लेकिन पास जाने की हिम्मत नहीं करते।

गुणहीन गुणवानों से द्वेष करते हैं।

बुद्धिमान लोग पहला भोजन पच जाने पर फिर खाते हैं, योगी लोग उतना खाते हैं जितने से जीवित रहे हैं, जवान लोग पेटभर खाते हैं, बूढ़े जब तक पसीना न आ जाय खाते ही रहते हैं, किन्तु कलन्दर इतना खा जाते हैं कि साँस की भी जगह नहीं रहती।

अगर पत्थर हाथ में हो और साँप नीचे तो उस समय सोच-विचार नहीं करना चाहिए।

अगर कोई बुद्धिमान मूर्खों के साथ वाद-विवाद करे तो उसे प्रतिष्ठा की आशा न रखनी चाहिये।

जिस मित्र को तुमने बहुत दिनों में पाया है उससे मित्रता निभाने का यत्न करो।

विवेक इन्द्रियों के अधीन है जैसे कोई सीधा मनुष्य किसी चंचल स्त्री के अधीन हो।

बुद्धि, बिना बल के छल और कपट है, बल बिना बुद्धि के मूर्खता और क्रूरता है।

जो व्यक्ति लोगों का प्रशंसापात्र बनने की इच्छा से वासनाओं का त्याग करता है, वह हलाल को छोड़कर हराम की ओर झुकता है।

दो बात असंभव हैं, एक तो अपने अंश से अधिक खाना, दूसरे मृत्यु से पहले मरना।

8. बोस्ताँ

फ़ारसी साहित्य की पाठ्य पुस्तकों में गुलिस्ताँ के बाद बोस्ताँ का ही प्रचार है । यह कहने में कुछ न होगी कि काव्यग्रंथों में बोस्ताँ का वही आदर है जो गद्य में गुलिस्ताँ का है। निज़मी का सिकन्दरनामा, फ़िरदौसी का शाहनामा, मौलाना रूम की मसनवी, और दीवान हाफिज़ यह चारों ग्रंथ बोस्ताँ के ही समान गिने जाते हैं। निज़मी और फ़िरदौसी वीर-रस में अद्वितीय हैं, मौलाना रूम की मसनवी भक्ति संबंधी ग्रंथों में अपना जवाब नहीं रखती और हाफिज़ प्रेम रस के राजा हैं। इन चारों काव्यों का आदर किसी न किसी अंश में उनके विषय पर निर्भर है। लेकिन बोस्ताँ एक नीतिग्रंथ है और नीति के ग्रंथ बहुधा जनता को प्रिय नहीं हुआ करते। अतएव बोस्ताँ का जो आदर और प्रचार है वह सर्वथा उसकी सरलता और विचारोंत्कर्षता पर निर्भर है। मौलाना रूम ने जीवन के गूढ़ तत्त्व का वर्णन किया है और धार्मिक विचार से मनुष्यों में उसका बड़ा मान है। भाषा की मधुरता, और प्रेम के भाव में हाफिज़ सादी से बहुत बढ़े हुए हैं। उनकी-सी मर्मस्पर्शिनी कविता फ़ारसी में और किसी ने नहीं की। उनकी गज़लों के कितने ही शेर जीवन की साधारण बातों पर ऐसे घटते हैं मानो उसी अवसर के लिये

लिखे गये हों। धन्य है शीराज़ की वह पवित्र भूमि जिसने सादी और हाफिज़ जैसे दो ऐसे अमूल्य रत्न उत्पन्न किये। भाषा और भाव की सरलता में सादी सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। फ़िरदौसी और निज़मी बहुधा अलौकिक बातों का वर्णन करते हैं। पर सादी ने कहीं अलौकिक घटनाओं का सहारा नहीं लिया है। यहाँ तक कि उनकी अत्युक्तियाँ भी अस्वाभाविक नहीं होतीं। उन्होंने समयानुसार सभी रसों का वर्णन किया है लेकिन करुणा-रस उनमें सर्वप्रधान है। दया के वर्णन में उनकी लेखनी बहुत ही करुण हो गयी है। सादी नमाज़ और रोज़े के पाबंद तो थे किन्तु सेवाधर्म को उससे भी श्रेष्ठ समझते थे। उन्होंने बार-बार सेवा पर जोर दिया है। उनका दूसरा प्रिय विषय राजनीति है। बादशाहों को न्याय, धर्म, दीनपालन और क्षमा का उपदेश करने में वह कभी नहीं थकते। उनको राजनीति पर लायलटी (राजभक्ति) का ऐसा रंग नहीं चढ़ा था कि वह खरी-खरी बातों के कहने से चूक जायँ। उनके राजनीति विषयक विचारों की स्वतंत्रता पर आज भी आश्चर्य होता है। इस बीसवीं शताब्दी में भी हमारे यहाँ बेगार की प्रथा कायम है। लेकिन आज के कई सौ वर्ष पहले अपने ग्रंथों में सादी ने कई जगह इसका विरोध किया है।

बोस्ताँ में दस अध्याय हैं। उनकी विषय सूची देखने से विदित होता है कि सादी की नीति शिक्षा कितनी विस्तीर्ण है।

प्रथम अध्याय – न्याय और राजनीति

द्वितीय अध्याय – दया

तृतीय अध्याय – प्रेम

चतुर्थ अध्याय – विनय

पंचम अध्याय – धैर्य

षष्ठ अध्याय – संतोष

सप्तम अध्याय – शिक्षा

अष्टम अध्याय – कृतज्ञता

नवम अध्याय – प्रायश्चित

दशम अध्याय – ईश्वर प्रार्थना

नीतिग्रंथों की आवश्यकता यों तो जन्म भर रहती है लेकिन पढ़ने का सबसे उपयुक्त समय बाल्यावस्था है। उस समय उनके मानव चरित्र का आरम्भ होता है इसीलिए पाठय पुस्तकों में बोस्ताँ का इतना प्रचार है। संसार की कई प्रसिद्ध भाषाओं में इसके अनुवाद हो चुके हैं। सर्वसाधारण में इसके जितने शेर लोकोक्ति के रूप में प्रचलित हैं उतने गुलिस्ताँ के नहीं। यहाँ हम उदाहरण की भाँति कुछ कथायें देकर ही संतोष करेंगे।

बोस्ताँ की कथायें

सीरिया देश का एक बादशाह जिसका नाम 'सालेह' था कभी-कभी अपने एक गुलाम के साथ भेष बदलकर बाज़रों में निकला करता था। एक बार उसे एक मस्जिद में दो फ़कीर मिले। उनमें से एक दूसरे से कहता था कि अगर यह बादशाह लोग जो भोग-विलास में जीवन व्यतीत करते हैं स्वर्ग में आवेंगे, तो मैं उनकी तरफ आँख उठाकर भी न देखूँगा। स्वर्ग पर हमारा अधिकार है क्योंकि हम इस लोक में दुःख भोग रहे हैं। अगर सालेह वहाँ बाग़ की दीवार के पास भी आया तो जूते से उसका भेजा निकाल लूँगा। सालेह यह बातें सुनकर वहाँ से चला आया। प्रातःकाल उसने दोनों फ़कीरों को बुलाया और यथोचित आदर सत्कार करके उच्चासन पर बैठाया। उन्हें बहुत-सा धन दिया। तब उनमें से एक फ़कीर ने कहा, हे बादशाह, तू हमारी किस बात से ऐसा प्रसन्न हुआ? बादशाह हर्ष से गद्गद होकर बोला, मैं वह मनुष्य नहीं हूँ कि ऐश्वर्य के अभिमान में दुर्बलों को भूल जाऊँ। तुम मेरी ओर से अपना हृदय साफ कर लो और स्वर्ग में मुझे ठोकर मारने का विचार मत करो। मैंने आज तुम्हारा सत्कार किया है, तुम कल मेरे सामने स्वर्ग का द्वार न बंद करना।

ईरान देश का बादशाह दारा एक दिन शिकार खेलने गया और अपने साथियों से छूट गया। कहीं खड़ा इधर-उधर ताक रहा था कि एक चरवाहा दौड़ता हुआ सामने आया। बादशाह ने इस भय से कि यह कोई शत्रु न हो तुरन्त धनुष चढ़ाया। चरवाहे ने चिल्लाकर कहा, हे महाराज, मैं आपका बैरी नहीं हूँ। मुझे मारने का विचार मत कीजिये। मैं आपके घोड़ों को इसी चारागाह में चराने लाया करता हूँ। तब बादशाह को धीरज हुआ। बोला, तू बड़ा भाग्यवान था कि आज मरते-मरते बच गया। चरवाहा हंसकर बोला, महाराज, यह बड़े खेद की बात है कि राजा अपने मित्रों और शत्रुओं को न पहचान सके। मैं हज़ारों बार आपके सामने गया हूँ। आपने घोड़े के संबंध में मुझसे बातें की हैं। आज आप मुझे ऐसा भूल गये। मैं तो अपने घोड़ों को लाखों घोड़ों में पहचान सकता हूँ। आपको आदमियों की पहचान होनी चाहिए।

बादशाह 'उमर' के पास एक ऐसी बहुमूल्य अंगूठी थी कि बड़े-बड़े जौहरी उसे देखकर दंग रह जाते। उसका नगीना रात को तारे की तरह चमकता था। संयोग से एक बार देश में अकाल पड़ा। बादशाह ने अंगूठी बेच दी और उसने एक सप्ताह तक अपनी भूखी प्रजा का उदर पालन किया। बेचने के पहले बादशाह के शुभचिंतकों ने उसे बहुत समझाया कि ऐसी अपूर्व अंगूठी मत बेचिये फिर न मिलेगी। उमर न माना। बोला, जिस राजा की प्रजा दुःख

में हो उसे यह अंगूठी शोभा नहीं देती। रत्न जटित आभूषणों को ऐसी दशा में पहिनना कब उचित कहा जा सकता है कि जब मेरी प्रजा दाने-दाने को तरसती हो।

दमिश्क में एक बार ऐसी अनावृष्टि हुई कि बड़ी-बड़ी नदियाँ और नाले सूख गये, पानी का कहीं नाम न रहा। कहीं था तो अनाथों की आँखों में। यदि किसी घर से धुआँ उठता था तो वह चूल्हे का नहीं किसी विधवा, दीन की आह का धुआँ था। उस समय मैंने अपने एक धनवान मित्र को देखा, जो उदासीन, सूखकर काँटा हो गया था। मैंने कहा, भाई तुम्हारी यह क्या दशा हो रही है, तुम्हारे घर में किस बात की कमी है? यह सुनते ही उसके नेत्र सजल हो गये। बोला, मेरी यह दशा अपने दुःख से नहीं, वरन् दूसरों के दुःख से हुई है। अनाथों को क्षुधा से बिलखते देखकर मेरा हृदय फटा जाता है। वह मनुष्य पशु से भी नीच है जो अपने देशवासियों के दुःख से व्यथित न हो।

एक दुष्ट सिपाही किसी कुएँ में गिर पड़ा। सारी रात पड़ा रोता-चिल्लाता रहा। कोई सहायक न हुआ। एक आदमी ने उलटे यह निर्दयता की कि उसके सिर पर एक पत्थर मार कर बोला दुरात्मन, तूने भी कभी किसी के साथ नेकी की है जो आज दूसरों से सहायता की आशा रखता है। जब हज़ारों

हृदय तेरे अन्याय से तड़प रहे हैं, तो तेरी सुधि कौन लेगा। कांटे बो कर फूल की आशा मत रख।

एक अत्याचारी राजा देहातियों के गधे बेगार में पकड़ लिया करता था, एक बार वह शिकार खेलने गया और एक हिरन के पीछे घोड़ा दौड़ाता हुआ अपने आदमियों से बहुत आगे निकल गया। यहाँ तक कि संध्या हो गयी। इधर-उधर अपने साथियों को देखने लगा। लेकिन कोई दीख न पड़ा। विवश होकर निकट के एक गाँव में रात काटने की ठानी। वहाँ क्या देखता है कि एक देहाती अपने मोटे ताज़े गधों को डंडों से मार-मारकर उसके धुर्रे उड़ा रहा है। राजा को उसकी यह कठोरता बुरी मालूम हुई। बोला, अरे भाई क्या तू इस दीन पशु को मार ही डालेगा! तेरी निर्दयता पराकाष्ठा को पहुँच गयी। यदि ईश्वर ने तुझे बल दिया है तो उसका ऐसा दुरुपयोग मत कर। देहाती ने बिगड़कर कहा, तुमसे क्या मतलब है? मैं जाने क्या समझकर इसे मारता हूँ। राजा ने कहा, अच्छा बहुत बक-बक मत कर, तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है, शराब तो नहीं पी ली? देहाती ने गंभीर भाव से कहा, मैंने न शराब पी है, न पागल हूँ, मैं इसे केवल इसीलिये मारता हूँ जिससे यह इस देश के अत्याचारी राजा के किसी काम का न रहे। लंगड़ा और बीमार होकर मेरे द्वार पर पड़ा रहे, यह मुझे स्वीकार है। लेकिन राजा को बेगार में देना स्वीकार नहीं। राजा यह उत्तर सुनकर चुप रह गया। रात तारे गिन-गिन कर

काटी। प्रातःकाल उसके आदमी खोजते हुए वहाँ आ पहुँचे। जब खा पीकर निश्चिन्त हुआ तो राजा को उस गँवार की याद आयी। उसे पकड़वा मँगाया और तलवार खींचकर उसका सिर काटने पर तैयार हुआ। देहाती जीवन से निराश हो गया और निर्भय होकर बोला, हे राजन्, तेरे अत्याचार से सारे देश में हाय-हाय मची हुई है। कुछ मैं ही नहीं बल्कि तेरी समस्त प्रजा तेरे अत्याचार से घबड़ा उठी है। यदि तुझे मेरी बात कड़ी लगती है तो न्याय कर कि फिर ऐसी बातें सुनने में न आवें। इसका उपाय मेरा सिर काटना नहीं, बल्कि अत्याचार को छोड़ देना है। राजा के हृदय में ज्ञान उत्पन्न हो गया। देहाती को क्षमा कर दिया और उस दिन से प्रजा पर अत्याचार करना छोड़ दिया।

सुना है कि एक फ़कीर ने किसी बादशाह से उसके अत्याचारों की निन्दा की। बादशाह को यह बात बुरी लगी और उसे कैद कर दिया। फ़कीर के एक मित्र ने उससे कहा, तुमने यह अच्छा नहीं किया। बादशाहों से ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए। फ़कीर बोला, मैंने जो कुछ कहा वह सत्य है। इस कैद का क्या डर, दो-चार दिन की बात है। बादशाह के कान में यह बात पहुँची। फ़कीर को कहला भेजा, इस भूल में न रहना कि दो-चार दिन में छुट्टी हो जायगी, तुम इसी कैद में मरोगे। फ़कीर यह सुनकर बोला, जाकर बादशाह से कह दो कि मुझे यह धमकी न दें। यह जिंदगी दो-चार दिन से

ज्यादा न रहेगी, मेरे लिए दुःख-सुख दोनों बराबर हैं। तू ऊँचे आसन पर बैठा दे तो उसकी खुशी नहीं, सिर काट डाल तो उसका कुछ रंज नहीं। मरने पर हम और तुम दोनों बराबर हो जायेंगे। दयाहीन बादशाह यह सुनकर और भी बिगड़ा और हुक्म दिया कि इसकी ज़बान तालू से खींच ली जाय। फ़कीर बोला, मुझको इसका भी भय नहीं है। खुदा मेरे मन का हाल बिना कहे ही जानता है। तू अपने को रो कि जिस शुभ दिन मरेगा देश में आनंदोत्सव की तरंगें उठने लगेंगी।

एक कवि किसी सज्जन के पास जाकर बोला, मैं बड़ी विपत्ति में पड़ा हुआ हूँ, एक नीच आदमी के मुझ पर कुछ रुपये आते हैं। इस ऋण के बोझ से मैं दबा जाता हूँ। कोई दिन ऐसा नहीं जाता कि वह मेरे द्वार का चक्कर न लगाता हो। उसकी बाण सरीखी बातों ने मेरे हृदय को चलनी बना दिया है। वह कौन-सा दिन होगा कि मैं इस ऋण से मुक्त हो जाऊँगा। सज्जन पुरुष ने यह सुनकर उसे एक अशरफी दी। कवि अति प्रसन्न होकर चला गया। एक दूसरा मनुष्य वहाँ बैठा था। बोला, आप जानते हैं वह कौन है। वह ऐसा धूर्त है कि बड़े-बड़े दुष्टों के भी कान काटता है। वह अगर मर भी जाय तो रोना न चाहिए। सज्जन ने उससे कहा चुप रह, किसी की निंदा क्यों करता है। अगर उस पर वास्तव में ऋण है तब तो उसका गला छूट गया। लेकिन यदि

उसने मुझसे धूर्तता की है तब भी मुझे पछताने की ज़रूरत नहीं क्योंकि रुपये न पाता तो वह मेरी निन्दा करने लगता।

मैंने सुना है कि हिजाज़ के रास्ते पर एक आदमी पग-पग पर नमाज़ पढ़ता जाता था। वह इस सद्मार्ग में इतना लीन हो रहा था कि पैरों से काँटे भी न निकालता था। निदान उसे अभिमान हुआ कि ऐसी कठिन तपस्या दूसरा कौन कर सकता है। तब आकाशवाणी हुई कि भले आदमी, तू अपनी तपस्या का अभिमान मत कर। किसी मनुष्य पर दया करना पग-पग पर नमाज़ पढ़ने से उत्तम है।

एक दीन मनुष्य किसी धनी के पास गया और कुछ माँगा। धनी मनुष्य ने देने के नाम नौकर से धक्के दिलवाकर उसे बाहर निकलवा दिया। कुछ काल उपरांत समय पलटा। धनी का धन नष्ट हो गया, सारा कारोबार बिगड़ गया। खाने तक का ठिकाना न रहा। उसका नौकर एक ऐसे सज्जन के हाथ पड़ा, जिसे किसी दीन को देखकर वही प्रसन्नता होती थी जो दरिद्र को धन से होती है। अन्य नौकर-चाकर छोड़ भागे। इस दुरवस्था में बहुत दिन बीत गये। एक दिन रात को इस धर्मात्मा के द्वार पर किसी साधु ने आकर भोजन माँगा। उसने नौकर से कहा उसे भोजन दे दो। नौकर जब भोजन देकर लौटा तो उसके नेत्रों से आँसू बह रहे थे। स्वामी ने पूछा, क्यों रोता

है? बोला, इस साधु को देखकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। किसी समय मैं उसका सेवक था। उसके पास धन, धरती सब था। आज उसकी यह दशा है कि भीख माँगता फिरता है। स्वामी सुनकर हँसा और बोला, बेटा संसार का यही रहस्य है। मैं भी वही दीन मनुष्य हूँ जिसे इसने तुझसे धक्के देकर बाहर निकलवा दिया था।

याद नहीं आता कि मुझसे किसने यह कथा कही थी कि किसी समय यमन में एक बड़ा दानी राजा था। वह धन को तृणवत समझता था, जैसे मेघ से जल की वर्षा होती है उसी तरह उसके हाथ से धन की वर्षा होती थी। हातिम का नाम भी कोई उसके सामने लेता तो चिढ़ जाता। कहा करता कि उसके पास न राज्य है न खज़ाना उसकी और मेरी क्या बराबरी? एक बार उसने किसी आनंदोत्सव में बहुत से मनुष्यों को निमंत्रण दिया। बातचीत में प्रसंगवश हातिम की भी चर्चा आ गयी और दो-चार मनुष्य उसकी प्रशंसा करने लगे। राजा के हृदय में ज्वाला-सी दहक उठी। तुरन्त एक आदमी को आज्ञा दी कि हातिम का सिर काट लाओ। वह आदमी हातिम की खोज में निकला। कई दिन के बाद रास्ते में उसकी एक युवक से भेंट हुई। वह अति गुणी और शीलवान था। घातक को अपने घर ले गया, बड़ी उदारता से उसका आदर-सम्मान किया। जब प्रातःकाल घातक ने विदा माँगी तो युवक ने अत्यंत विनीत भाव से कहा कि यह आप ही का घर है, इतनी जल्दी

क्यों करते हैं। घातक ने उत्तर दिया कि मेरा जी तो बहुत चाहता है कि ठहरूँ लेकिन एक कठिन कार्य करना है, उसमें विलम्ब हो जायगा। हातिम ने कहा, कोई हानि न हो तो मुझसे भी बतलाओ कौन-सा काम है, मैं भी तुम्हारी सहायता करूँ। मनुष्य ने कहा, यमन के बादशाह ने मुझे हातिम का वध करने भेजा है। मालूम नहीं, उनमें क्यों विरोध है। तू हातिम को जानता हो तो उसका पता बता दे। युवक निर्भीकता से बोला, हातिम मैं ही हूँ, तलवार निकाल और शीघ्र अपना काम पूरा कर। ऐसा न हो कि विलंब करने से तू कार्य सिद्ध न कर सके। मेरे प्राण तेरे काम आवें तो इससे बढ़कर मुझे और क्या आनन्द होगा। यह सुनते ही घातक के हाथ से तलवार छूटकर ज़मीन पर गिर पड़ी। वह हातिम के पैरों पर गिर पड़ा और बड़ी दीनता से बोला, हातिम तू वास्तव में दानवीर है। तेरी जैसी प्रशंसा सुनता था उससे कहीं बढ़कर पाया। मेरे हाथ टूट जायँ अगर तुझ पर एक कंकरी भी फेंकूँ। मैं तेरा दास हूँ और सदैव रहूँगा। यह कहकर वह यमन लौट आया। बादशाह का मनोरथ पूरा न हुआ तो उसने उस मनुष्य का बहुत तिरस्कार किया और बोला, मालूम होता है कि तू हातिम से डरकर भाग आया। अथवा तुझे उसका पता न मिला। उस मनुष्य ने उत्तर दिया, राजन, हातिम से मेरी भेंट हुई लेकिन मैं उसका शील और आत्मसमर्पण देखकर उसके वशीभूत हो गया। इसके पश्चात् उसने सारा वृत्तांत कह

सुनाया। बादशाह सुनकर चकित हो गया और स्वयं हातिम की प्रशंसा करते हुए बोला, वास्तव में वह दानियों का राजा है, उसकी जैसी कीर्ति है वैसे ही उसमें गुण हैं।

बायज़ीद के विषय में कहा जाता है कि वह अतिथि पालन में बहुत उदार था। एक बार उसके यहाँ एक बूढ़ा आदमी आया जो भूख-प्यास से बहुत दुःखी मालूम होता था। बायज़ीद ने तुरन्त उसके सामने भोजन मँगवाया। वृद्ध मनुष्य भोजन पर टूट पड़ा। उसकी जिह्वा से 'बिस्मिल्लाह' शब्द न निकला। बायज़ीद को निश्चय हो गया कि वह काफिर है। उसे अपने घर से निकलवा दिया। उसी समय आकाशवाणी हुई कि बायज़ीद मैंने इस काफिर का सौ वर्ष तक पालन किया और तुमसे एक दिन भी न करते बन पड़ा।

किसी भक्त ने सपने में एक साधु को नर्क में और एक राजा को स्वर्ग में देखकर अपने गुरु से पूछा कि यह उलटी बात क्योंकर हुई। गुरुजी बोले, उस राजा को साधुओं और सज्जनों के सत्संग से रुचि थी इसलिए उसने मरने के पीछे स्वर्ग में उन्हीं के संग वास पाया और उस साधु को राजाओं और अमीरों की संगत का शौक था सो वही वासना उसको नर्क में उनकी मुसाहबत के लिए खींच लाई।

कारूँ बादशाह को हज़रत मूसा ने उपदेश किया कि भलाई वैसी ही गुप्त रीति से कर जैसे मालिक ने तेरे साथ की है। उदारता वही है जिसमें निहोरे का मेल न हो तभी उसका फल मिलता है। सच्चे उपकार के पेड़ की डालियाँ आकाश के परे पहुँचती हैं।

किसी ने सपने में प्रलय की लीला देखी कि एक भारी झुंड कुकर्मियों का भय और कष्ट से चिल्ला रहा है पर उनमें से एक आदमी मोती की माला पहने शीतल छाँह में बैठा है। उससे पूछा, तेरा किस कारण ऐसा आदर हुआ है। जवाब दिया, मैंने अपने द्वार पर अंगूर की टट्टी लगाई थी जिसकी छाँह में एक बार एक महात्मा ने विश्राम किया था।

एक बुद्धिमान अपने लड़कों को समझाया करते थे कि बेटा, विद्या सीखो, संसार के धन-धाम पर भरोसा न रक्खो, तुम्हारा अधिकार तुम्हारे देश के बाहर काम नहीं दे सकता और धन के चले जाने का सदा डर रहता है चाहे उसे एक बारगी चोर ले जाय या धीरे-धीरे खर्च हो जाय परन्तु विद्या धन का अटूट स्रोत है और यदि कोई विद्वान निर्धन हो जाय तो भी दुःखी न होगा क्योंकि उसके पास विद्यारूपी द्रव्य मौजूद है। एक समय दमिश्क नगर में ग़दर हुआ, सब लोग भाग गये तब किसानों के बुद्धिमान लड़के बादशाह के मंत्री हुए और पुराने मंत्रियों के मूर्ख लड़के गली-गली भीख माँगने लगे।

अगर पिता का धन चाहते हो तो पिता के गुण सीखो क्योंकि धन तो चार-दिन में चला जा सकता है।

किसी ने हज़रत इमाम मुरशिद बिन गज़ली से पूछा कि आप में ऐसी भारी योग्यता कहाँ से आयी। जवाब दिया, इस तरह कि जो बात मैं नहीं जानता था उसे दूसरों से पूछकर सीखने में मैंने लाज न की। यदि रोग से छूटा चाहते हो तो किसी गुनी वैद को नाड़ी दिखाओ। जो बात न जानते हो उसके पूछने में लाज या आलस न करो क्योंकि इस सहज जुगज से योग्यता की सीधी सड़क पर पहुँच जाओगे।

एक बादशाह ने मरते समय आज्ञा दी कि मेरे मरने के सबेरे पहला आदमी जो नगर के फाटक में घुसे वह बादशाह बनाया जाय। दैवगति से सबेरे एक भिखमंगा फाटक में घुसा। उसे लोगों ने लाकर राजगद्दी पर बिठा दिया। थोड़े ही दिनों में उसकी अयोग्यता और निर्बलता से कितने ही राजमंत्री और सूबे स्वतंत्र हो बैठे और आस-पास के बादशाहों ने चढ़ाई करके बहुत-सा हिस्सा उसके राज्य का छीन लिया। बेचारा भिक्षुक राजा इन उत्पातों से उदास और दुःखी था कि उसका एक पहला साथी जो बाहर गया हुआ था लौटकर आया और अपने पुराने मित्र को उसका अचरज भाग जगने पर बधाई दी। बादशाह बोला, भाई मेरे अभाग पर रोओ क्योंकि भीख माँगने के

काल में तो मुझे केवल रोटी की चिंता थी और अब देशभर की झंझट और सम्हाल का बोझ मेरे सिर पर है और चूकने की दशा में असह दुःख। संसार के जंजाल में जो फँसा सो मर मिटा, यहाँ का सुख भी निपट दुःख रूप है, अब मेरी आँखों के सामने साफ दरसता है कि संतोष के बराबर दूसरा धन संसार में नहीं है।

9. सादी की लोकोक्तियाँ

किसी लेखक की सर्वप्रियता इस बात से भी देखी जाती है कि उसके वाक्य और पद कहावतों के रूप में कहाँ तक प्रचलित हैं। मानवचरित्र, पारस्परिक व्यवहार आदि के संबंध में जब लेखक की लेखनी से कोई ऐसा सारगर्भित वाक्य निकल जाता है जो सर्व-व्यापक हो तो वह लोगों की ज़बान पर चढ़ जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी की कितनी ही चौपाइयाँ कहावतों के रूप में प्रचलित हैं। अंग्रेज़ी में शेक्सपियर के वाक्यों से सारा साहित्य भरा पड़ा है। फ़ारसी में जनता ने यह गौरव शेख़ सादी को प्रदान किया है। इस क्षेत्र में वह फ़ारसी के समस्त कवियों से बढ़े-चढ़े हैं। यहाँ उदाहरण के लिए कुछ वाक्य दिये जाते हैं

अगर हिन्जिल खुरी अज़ दस्ते खुशखूय,

बेह अज़ शरीनी अज़ दस्ते तुरुशरूय।

कवि रहीम के इस दोहे में यही भाव इस तरह दर्शाया गया है

अमी पियावत मान बिन, रहिम हमें न सुहाय।

प्रेम सहित मरियो भलो, जो विषय देई बुलाय॥

आनांकि ग़नी तरन्द मुहताज तरन्द।

(जो अधिक धनाढ्य हैं वही अधिक मोहताज है।)

हर ऐब कि सुल्तां बेपसन्दद हुनरस्त।

(यदि राजा किसी ऐब को भी पसंद करे तो वह हुनर हो जाता है।)

हाजमे मश्शाता नेस्त रूय दिलाराम रा।

(सुंदरता बिना शृंगार ही के मन को मोहती है।)

स्वाभाविक सौंदर्य जो सोहे सब अंग माहिं।

तो कृत्रिम आभरन की आवश्यकता नाहिं।

परतवे नेकां न गीरद हरकि बुनियादश बदस्त।

(जिसकी अस्ल खराब है उस पर सज्जनों के सत्संग का कुछ असर नहीं होता।)

दुश्मन न तवाँ हकीरो बेचारा शुमुर्द।

(शत्रु को कभी दुर्बल न समझना चाहिये।)

आकश्बत गुगज़दा गुर्ग शवद।

(भेड़िये का बच्चा भेड़िया ही होता है।)

दर बाग़ लाला रोयदो दर शोर बूम ख़रा ।

(लाला फल बाग़ में उगता है, ख़स ज़ो घास है, ऊसर में।)

तवंगरी बदिलस्त न बमाल,

बुजुर्गी बअकलस्त न बसाल।

(धनी होना धन पर नहीं वरन् हृदय पर निर्भर है, बड़प्पन अवस्था पर नहीं वरन् बुद्धि पर निर्भर है।)

सघन होन तैं होत नहिं, कोऊ लच्छ मीवान।
मन जाको धनवान है, सोई धनी महान॥

हसूद रा चे कुनम को ज़े खुद बरंज दरस्त।

(ईर्ष्यालु मनुष्य स्वयं ही ईर्ष्या-अग्नि में जला करता है। उसे और सताना व्यर्थ है।)

क़द्रे आफियत आंकसे दानद कि बमुसीबते गिरफ्तार आयद।

(दुख भोगने से सुख के मूल्य का ज्ञान होता है।)

विपति भोग भोग गरू, जिन लोगनि बहुबार।
सम्पति के गुण जानही, वे ही भले प्रकार।

चु अज़बे बदर्द आबुरद रोज़गार,
दिगर अज़वहारा न मानद करार।

(जब शरीर के किसी अंग में पीड़ा होती है तो सारा शरीर व्याकुल हो जाता है।)

हर कुजा चश्मए बुवद शीरीं,
मरदुमों मुर्गों मोर गिर्दायन्द।

विमल मधुर जल सों भरा, जहाँ जलाशय होय।
पशु पक्षी अरु नारि नर, जात तहाँ सब कोय॥

आंरा कि हिसाब पाकस्त अज़ मुहासिबा चेबाक।

(जिसका लेखा साफ है उसे हिसाब समझाने वाले का क्या डर?)

दोस्त आं बाशद गीरद दस्ते दोस्त।
पर परेशां हालि ओ दर माँदगी।

(मित्र वही है जो विपत्ति में काम आवे।)

तोपाक बाश बिरादर! मदार अज़ कस बाक,
ज़नन्द जामये नापाक गाजुरां बरसंग।

(तू बुराइयों से पवित्र (दूर) रहे तो तेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। धोबी केवल मैले कपड़े को पत्थर पर पटकता है।)

चु अज़ कशैमे यके बेदानिशी कर्द,
न केहरा मन्जिलत मानद न मेहरा।

(किसी जाति के एक आदमी से बुराई हो जाती है तो सारी की सारी जाति बदनाम हो जाती है। न छोटे की इज़्ज़त रहती है न बड़े की।)

पाय दर ज़ोर पेशें दोस्ता,
बेह कि बा बेगानगां बोस्ताँ।

(मित्रों के साथ बन्दीगृह भी स्वर्ग है पर दूसरों के साथ उपवन नरक समान है।)

नेक बाशी व बदत गोयद ख़ल्क,
बेह कि बद बाशी व नेकत गोयन्द।

(सन्मार्ग पर चलते हुए अगर लोग बुरा कहें तो यह उससे अच्छा है कि कुमार्ग पर चलते हुए लोग तुम्हारी प्रशंसा करें।)

बातिलस्त उद्बचे मुद्दई गोयद,

(विपक्षी की बात मिथ्या समझी जाती है।)

मर्द बायद कि गीरद अन्दर गोश,

गर नविश्तास्त पन्द बर दीवार।

(मनुष्य को चाहिए कि यदि दीवार पर भी उपदेश लिखा हुआ मिले तो उसे ग्रहण करे।)

हमरह अगर शिताब कुनद हमरहे तो नेस्त।

(तेरा साथी जल्दी करता है तो वह तेरा साथी नहीं है।)

हक्का कि बा डकूबत दोज़ख बराबरस्त,

रफतन ब पायमर्दी हमसाया दर बहिश्त।

(पड़ोसी की सिफारिश से स्वर्ग में जाना नरक में जाने के तुल्य है।)

रिज्क हरचन्द बेगुमाँ बरसद,

शर्ते अक़्लस्त जुस्तन अज़ दरहा।

(यद्यपि भूखों कोई नहीं मरता, ईश्वर सबकी सुधि लेता है, तथापि बुद्धिमान आदमी का धर्म है कि उसके लिए प्रयत्न करे।)

बदोजद तमा दीदए होशमन्द।

(तृष्णा चतुर को भी अंधा बना देती है।)

गरदने बेतमा बुलन्द बुवद।

(निस्पृह मनुष्य का सिर सदा ऊँचा रहता है।)

निकोई बा बदां करदन चुनानस्त,

कि बद करदन बजाए नेक मरदां।

(दुर्जनों के साथ भलाई करना सज्जनों के साथ बुराई करने के समान है।)

यके नुकसाने माया दीगर शुभातते हमसाया।

(गांठ से धन जाय लोग हँसें।)

खश्ताये बजुर्गां गिरफ्तन ख़तास्त।

(बड़ों का दोष दिखाना दोष है।)

ख़रे ईसा अगर बमक्का श्वद,

चूं बयायद हनोज़ खर बाशद।

(कौआ कभी हंस नहीं हो सकता।)

जौरे उस्ताद बेह ज़महरे पिदर।

(गुरु की ताड़ना पिता के प्यार से अच्छी है।)

करीमाँरा बदस्त अन्दर दिरम नेस्त,

खुदा बन्दा न्याम तरा करम नेस्त।

(दानियों के पास धन नहीं होता और धनी दानी नहीं होते।)

परागन्दा रोज़ों परागन्दा हिल।

(वृत्तिहीन मनुष्य का चित्त स्थिर नहीं रहता।)

पेशे दीवार उद्धचे गोई होशदार,

ता न बाशद दर पसे दीवार गोश।

(दीवार के भी कान होते हैं, इसका ध्यान रख।)

कि खुब्स नफ़श न गरदद ब सालहा मालूम।

(स्वभाव की नीचता बरसों में भी नहीं मालूम होती।)

मुश्क आनस्त कि खुद बबूयद न कि अत्तर बगोयद।

(कस्तूरी की पहचान उसकी सुगन्धि से होती है गान्धी के कहने से नहीं।)

कि बिसियार ख्वारस्त बिसियार ख्वार।

(बहुत खानेवाले आदमी का कभी आदर नहीं होता।)

कुहन जामए खशेश आ रास्तन,

बेह अज़ जामए आरियत ख़्वास्तन।

(अपने पुराने कपड़े मंगनी के कपड़ों से अच्छे हैं।)

चु सायल अज़ तो बज़री तलब कुनद चीज़े,

बेदेह बगर न सितमगर बजशेर बसितानद।

(दोनों को दे, वर्ना छीनकर ले लेंगे।)

सखुनश तल्ख न ख़्वाहो दहनश शीरीं कुन।

(अगर किसी की कड़वी बात नहीं सुनना चाहे तो उसका मुँह मीठा कर।)

मोरचगांरा चु बुवद इत्तफ़ाक,

शेऱेजिया रा बदरारूद पोस्त।

(अगर चिउटियाँ एका कर लें, तो शेर की खाल खींच सकती हैं।)

हुनर बकार न आयद चु बख़्त बदशाह।

(भाग्यहीन मनुष्य के गुण भी काम नहीं आते।)

हरकि सुखन न संजद अज़ जवाब बरंजदा।

(जो आदमी तौलकर बात नहीं करता उसे कठोर बातें सुननी पड़ती हैं।)

अन्दक अन्दक बहम शवद बिसियार।

(एक-एक दाना मिलकर ढेर हो जाता है।)

यद्यपि सादी ने जो उपदेश किये हैं वह अन्य लेखकों के यहाँ भी पाये जाते हैं, लेकिन फ़ारसी में सादी की सी ख्याति किसी ने नहीं पाई थी। इससे विदित होता है कि लोकप्रियता बहुत कुछ भाषा सौंदर्य पर अवलंबित होती है। यहाँ हमने सादी के कुछ वाक्य दिये हैं लेकिन यह समझना भूल होगी कि केवल यही प्रसिद्ध हैं। सारी गुलिस्ताँ ऐसे ही मार्मिक वाक्यों से परिपूर्ण है। संसार में ऐसा एक भी ग्रंथ नहीं है जिसमें ऐसे वाक्यों का इतना आधिक्य हो जो कहावत बन सकते हो।

गोस्वामी तुलसीदास पर यह दोषारोपण किया जाता है कि उन्होंने कई भ्रमोत्पादक चौपाइयाँ लिखकर समाज को बड़ी हानि पहुँचाई है। कुछ लोग सादी पर भी यही दोष लगाते हैं और यह वाक्य अपने पक्ष की पुष्टि में पेश करते हैं

अगर शहरोज़ रा गोयद शबस्त इं,

बबायद गुफ़्त ईनक माहो परवीं।

(अगर बादशाह दिन को रात कहे तो कहना चाहिए कि हाँ, हुजूर, देखिये चांद निकला हुआ है।)

इस पर यह आक्षेप किया जाता है कि सादी ने बादशाहों को झूठी खुशामद करने का परामर्श दिया है। लेकिन जिस निर्भयता और स्वतंत्रता से उन्होंने बादशाहों को ज्ञानोपदेश किया है उस पर विचार करते हुए सादी पर यह आक्षेप करना बिल्कुल न्याय संगत नहीं मालूम होता। इसका अभिप्राय केवल यह है कि खुशामदी लोग ऐसा करते हैं।

इसी तरह लोग इस वाक्य पर भी एतराज करते हैं

दरोग़े मसलहत आमेज़ बेह,
अज़ रास्ती फितना अंगेज़।

(वह झूठ जिससे किसी की जान बचे उस सच से उत्तम है जिससे किसी की जान जाय।)

कहा जाता है कि असत्य सर्वथा अक्षम्य है और सादी का यह वाक्य झूठ के लिए रास्ता खोल देता है। लेकिन विवाद के लिए इस वाक्य की उपेक्षा चाहे की जाय और आदर्श के उपासक चाहे इसे निन्द्य समझें, पर कोई सहृदय मनुष्य इसकी उपेक्षा न करेगा। इसके साथ ही सादी ने आगे

चलकर एक और वाक्य लिखा है जिससे विदित होता है कि वह स्वार्थ के लिए किसी हालत में भी झूठ बोलना उचित नहीं समझते थे

गर यस्त सुख़न गोई ब दर बन्द ब मानी,
बेह जशंकि दरोग़त देहद अज़ बन्द रिहाई।

(यदि सच बोलने से तुम कैद हो जाओ तो यह उस झूठ से अच्छा है जो कैद से मुक्त कर दे।)

इससे जान पड़ता है कि पहला वाक्य केवल दूसरों की विपत्ति के पक्ष में है, अपने लिये नहीं।

10. ग़ज़लें

ग़जल फारसी कविता का प्रधान अंग है । कोई कवि, जब तक वह ग़ज़ल कहने में निपुण न हो। ग़ज़लें समाज में आदर का स्थान नहीं पाता। यों तो ग़ज़ल शृंगार का विषय है, किन्तु कवियों ने इसके द्वारा सभी रसों का वर्णन किया है, जिसमें भक्ति, वैराग्य, संसार की असारता आदि विषय बड़े महत्त्व के हैं। गज़लों के संग्रह को फ़ारसी में दीवान कहते हैं। सादी की सम्पूर्ण

गज़लों के चार दीवान हैं, जिनके नाम लिखने की कोई ज़रूरत नहीं मालूम होती। इन चारों दीवानों में कोई तो युवाकाल में, कोई प्रौढ़ावस्था में लिखा गया है किन्तु उनमें कहीं भाव का वह अन्तर नहीं पाया जाता जो बहुधा भिन्न-भिन्न अवस्था की कविताओं में मिला करता है। उनकी सभी ग़ज़लें सरलता और वाक्य निपुणता में समतुल्य हैं। और यह कवि की रचना-शक्ति का बहुत बड़ा प्रमाण है।

यद्यपि शेख़ सादी के पूर्वकालीन कविगण भी ग़ज़लें कहते थे, किन्तु उस समय क़सीदे और मसनवी की प्रधानता थी। गज़लों में साधारण भाव प्रकट किये जाते थे और शृंगार को छोड़कर दूसरे रसों का उसमें प्रायः अभाव था। सादी ने गज़लों में ऐसे गूढ़ रहस्यों और मर्मस्पर्शी भावों को व्यक्त किया कि लोग क़सीदे तथा मसनवियों को छोड़कर गज़लों पर टूट पड़े और ग़ज़ल फ़ारसी कविता का प्रधान अंग बन गई। इसी से समालोचकों ने सादी को ग़ज़ल में प्रधान माना है। सादी के पहले के दो कवियों ने क़सीदे कहने में विशेष प्रतिभा दिखाई है अनवर और खशकानी ये दोनों कवि इस विषय में अद्वितीय हैं। लेकिन उनकी गज़लों में वह मार्मिकता नहीं पाई जाती जो सादी ने अपनी गज़लों में कूट-कूटकर भर दी। बात यह है कि ग़ज़ल कहने के लिए हृदय में नाना प्रकार के भावों का होना अत्यावश्यक

है, केवल इतना ही नहीं, उन भावों को कुछ ऐसे अनूठे ढंग से वर्णन करना चाहिए कि उनसे सुनने वाला तुरन्त मुग्ध हो जाय।

अनवरी का एक शेर है –

हमा बामन जफ़ा कुनद लेकिन,
वज़फ़ा हेच अजशे नया ज़रम।

भावार्थ – वह (प्रियतम) मेरे ऊपर सदैव जुल्म किया करता है, किन्तु मैं इनकी जरा भी शिकायत नहीं करती।

भाव के सुंदर होने में संदेह नहीं, क्योंकि दुखड़ा आशिकों की पुरानी बात है। किन्तु कवि ने उसे स्पष्ट रूप से वर्णन करके उसकी मिट्टी खराब कर दी। देखिये इसी भाव को सादी साहब किस ढंग से दर्शाते हैं –

कादिर बर हरचेमी ख़्वाही बजुज़ आ ज़रे मन,
ज़ाँकिगर शमशीर बर फ़रक़म ज़नी आज़र नेस्त।

भावार्थ – तू सब कुछ कर सकता है किन्तु मुझ पर जुल्म नहीं कर सकता, क्योंकि यदि तू मेरे सिर पर तलवार मारे तो उससे मुझे कष्ट नहीं होता।

यह स्मरण रखना चाहिये कि ग़ज़ल प्रधानतः श्रृंगार का विषय है, इसलिए कविगण जब इसके द्वार भक्ति, वैराग्य, वंदना आदि का वर्णन करते हैं तो उनको रसिकता की ही आड़ लेनी पड़ती है। अतएव शराब की मस्ती से ईश्वर प्रेम, शराब से ज्ञान, आत्म-दर्शन, शराब पिलाने वाले साकी से गुरु, ज्ञानी, माशूक (प्रियतमा) से ईश्वर का बोध कराते हैं। इसी प्रकार वह बुलबुल से प्रेमी, उसके पिंजरे से दुखमय संसार और माली से विपत्ति का आशय प्रकट करते हैं। यह प्रणाली इतनी सर्ब प्रसिद्ध हो गई है कि किसी को कवि के आंतरिक भावों के जानने में सन्देह नहीं हो सकता। भक्ति के लिए हृदय की स्वच्छता तथा निर्मलता का होना आवश्यक है। कपट के साथ भक्ति का मेल नहीं हो सकता, इसलिए कविगण भगवे बाने की निंदा करने से कभी नहीं थकते। मस्जिद के आविद की अपेक्षा जो संसार को दिखाने के लिये यह स्वाँग रचे हुए हैं वह वासनाओं में फँसा हुआ मनुष्य कहीं सहृदय है जिसके हृदय में कपट नहीं। विद्वता और धर्म तथा कर्तव्य-परायणता आदि गुणों से जो मनुष्य में बहुधा अभिमान का उद्भव करते हैं, अज्ञान, मूर्खता तथा भ्रष्टता कहीं उत्तम है जो मानव हृदय में विनय, दीनता तथा नम्रता उत्पन्न करती है।

इसलिए कविगण साधुवेष, विद्वता, धार्मिकता, विवेक आदि की खूब दिल खोलकर हँसी उड़ाते हैं और भ्रष्टता, मूर्खता, रसिकता को खूब सराहते हैं,

वे पीतवसनधारी महात्माओं को लताड़ते हैं, और शराबियों तथा शृंगारियों के आगे शीश झुकाते हैं, वे ज्ञानियों को मूर्ख और मूर्खों को ज्ञानी कहते हैं। शेख़ सादी के पहले भी यह प्रणाली संस्कृत हो चुकी थी पर सादी ने इसके प्रभाव और चमत्कार को उज्ज्वल कर दिया। और यह प्रणाली कुछ ऐसी सर्वप्रिय सिद्ध हुई कि बाद वाले कवियों ने तो इन्हीं विषयों को ग़ज़ल का मुख्य अंग बना दिया और हाफिज़ ने सादी को भी पीछे कर दिया।

अब हम सादी की गज़लों के कुछ शेर उद्धृत करते हैं जिनको देखकर रसिक-वृन्द स्वयं यह निर्णय कर सकेंगे कि इन गज़लों में कितना लालित्य और रस भरा हुआ है।

अय कि गुफ़्ती हेच मुशकिल चूं फिरा के यार नेस्त,
गर उमीदे वस्ल बाशद आंचुनां दुशवार नेस्त।

भावार्थ – यद्यपि प्रियतम का वियोग बहुत कष्टजनक है, तथापित मिलाप की आशा हो तो उसका सहना कुछ कठिन नहीं है।

हरको ब हमा उमरश सौदाय गुले बूदस्त,
दानद कि चरा बुलबुल दीवाना हमी बाशद।

भावार्थ – जिस मनुष्य ने सारा जीवन किसी फल के प्रेम में व्यतीत किया है वहीं जानता है कि बुलबुल क्यों दीवाना रहता है।

दिलों ज़नम ब तो मश ग़ूलो निगह बट चपो रास्त,
ता न दानन्द रकशीबां कि तू मंजूर मनी।

भावार्थ -मैं तो तेरी ओर तन्मय हूँ पर आँखें दाहिने-बायें फेरता रहता हूँ जिसमें प्रतिद्वन्द्वियों को यह न ज्ञात हो सके कि तू मेरा प्रियतम है।

इस शेर में कितना लालित्य है इसे रसिकजन स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

दीगरां चूं ब रवन्द अज़ नजर अज़ दिल ब रवन्द,
तो चुनां दर दिले मन रफश्ता कि जो दर बनी।

भावार्थ – साधारणतः जब कोई नज़रों से दूर हो जाता है तो उसकी याद भी मिट जाती है, किन्तु तूने मेरे हृदय में इस प्रकार प्रवेश किया है, जैसा प्राण शरीर में।

कितनी मनोरम उक्ति है!

शर्बते तल्ख तर अज दर्दे फिराकत बायद,
ता कुनद लज्ज़ते वस्ले तो फरामोश मरा।

भावार्थ – तुझसे प्रेमालिंगन के आनंद को भुलाने के लिये तेरे वियोग से भी दारुण दुःख चाहिये।

अन्य कवियों ने वियोग दुख वर्णन में खूब आँसू बहाए हैं, पर सादी प्रेमालाप के स्मरण में विरह के दुःख को भूल जाता है। वियोग विस्मृति का कितना अच्छा उपाय, कैसी अक्सीर दवा निकलती है।

बर अन्दली बे आशिक गर विषकनी कफरा
अज़ं जौकशे अन्दररूनश परवायद दर न बाशद।

भावार्थ – प्रेममग्न बुलबुल के पिंजरे को यदि तू तोड़ डाले तो भी अपने हृदयानुराग के कारण उसे दरवाज़े की सुधि भी न रहेगी।

कितना प्यारा लाजबाव शेर है! बुल बुल प्रेमानुराग में ऐसी तन्मय हो रही थी कि यदि कोई उसके पिंजरे को तोड़ डाले तो भी वह उसमें से न निकले। अन्य कवियों के आशिक कपड़े फाड़ते हैं, जंगलों में मारे-मारे फिरते हैं, विरह कल्पना में आठों पहर आँसू की धारा बहाया करते हैं, मौका पाते ही कैदखाने से भाग खड़े होते हैं, जंजीरों को तोड़ डालते हैं, दीवारों की फांद जाते हैं और यदि इतना साहस न हुआ तो बहार और गुल और चमन की याद में तड़पते रहते हैं, पर सादी प्रेम में इतने मग्न हैं कि उन्हें

किसी बात की चिंता ही नहीं। प्रेम का कितना ऊँचा आदर्श है, उसके गहरे रहस्य को कितने मुग्धाकारी आनंदमय शब्दों में वर्णन किया है।

बूद हमेश-पेश अज़ीं रस्मे तो बेगुन-कुशी
अज़ चे मरा नमीं कुशी मन चे गुनाह करदा अम।

भावार्थ – इसके पहले तू बेगुनाहों को कत्ल किया करता था। मैंने क्या गुनाह किया है कि मुझे कत्ल नहीं करता।

जों न दारद हरकि जानानेश नेस्त
तंग ऐशस्त आं कि बुस्तानेश नेस्त।

भावार्थ – वह प्राण शून्य है जिसका कोई प्राणेश्वर नहीं, वह भाग्यहीन है जिसके कोई बाग़ नहीं।

इस शेर में भक्ति रस का कैसा गंभीर स्वाद भरा हुआ है।

चुनां बमूए तो आशुफत-अम बबूए मस्त,
कि नेस्तम ख़बर अज़ हर चे दर दो आलम हस्त।

भावार्थ – मैं तेरे केशों में ऐसा उलझा और उनकी सुगन्धि में ऐसा मस्त हूँ कि मुझे लोक, परलोक की कुछ सुधि ही नहीं।

गुलामे हिम्मते आनम कि पायबन्द य केस्त,

ब जानिबे मुत अल्लिक शुद अज़ हज़ार बरूस्त।

भावार्थ – मैं उसी का सेवक हूँ जो केवल एक का अनुरागी है, जो एक का होकर हजारों से मुक्त हो जाता है।

निगाहे मन बतो वो दीगरां ब तो मशगूल,

मुआशिरां ज़े मयो आरिफशं ज़े साकशी मस्त।

भावार्थ – मेरी आँखें तेरी ओर हैं. तुझसे अन्य लोग बातें कर रहे हैं। भोगियों के लिये शराब चाहिये, ज्ञानी शराब पिलाने वालों को देखकर ही मस्त हो जाता है।

बड़े मार्के का शेर है, प्रेमानुराग के एक नाजुक पहलू को अत्यंत भावपूर्ण रूप से वर्णन किया है। भक्तों को ईशचिंतन ही सबसे बड़ा पदार्थ है, उसके दर्शन करने की उन्हें अभिलाषा नहीं। शराब पीकर मस्त हुए तो क्या बात रही, मज़ा तो जब है कि साकशी (शराब पिलाने वाले) के दर्शन ही से आत्मा तृप्त हो जाय।

दिले कि आशिकशे साबिर बुबद मगर संगस्त,

ज़े इश्क ता ब सबूरी हज़ार फ़र्सगस्त।

भावार्थ – जिस हृदय में प्रेम के साथ धैर्य भी है वह परस्पर है। प्रेम और धर्म में सौ कोस का अंतर है।

चे तरबियत शुनवम या मसलहत बीनम

मरा कि चश्म ब साकशी व गोश बर चंगस्त।

भावार्थ – मैं किसी का उपदेश क्या सुनूँ और क्या उचित-अनुचित का विचार करूँ, मेरी आँखें तो साकशी की ओर और कान चंग की ओर लगे हुए हैं। आशय स्पष्ट है।

खल्क मी गोयद कि जाहो फ़ज्ल दर फ़र्जानगीस्त

गो मुवाश ईंहा, कि मा रंदाने ना फज़ीना एम।

भावार्थ – अगर प्राण के बदले में भी शराब मिले तो सस्ती है, ले ले, क्योंकि शराबखाने की मिट्टी भी अमृत से उत्तम है।

रूएस्त माह पैकरो मूएस्त मुश्कबूय,

हर लालएँ कि मी दमद अज़ खशको संबुले।

भावार्थ -मिट्टी से जो लाले (एक प्रकार का फल) या सैबुल (एक प्रकार की घास) निकलते हैं, वास्तव में प्रत्येक किसी का चन्द्रमुख या सुगंध से भरे हुए केश हैं।

सैबुल की केश से उपमा दी जाती है। वेदान्त का सार एक शेर में निकालकर रख दिया है।

गज़लों का समाज पर क्या प्रभाव पड़ा इसके विषय में कुछ कहना अनुपयुक्त न होगा। श्रृंगार रस की कविता विलासिता को उत्तेजित करती है, यह एक सर्वसिद्ध बात है और जब श्रृंगार के साथ कविता में विद्या, धर्म, आचार, नियम, संयम, और सिद्धान्त का अपमान भी किया जाय, तो उसकी विकारक शक्ति और भी बढ़ जाती है। इसमें संदेह नहीं कि सादी और अन्य कवियों ने कबीर साहब की भाँति ढोंग, ढकोसला, नुमाइश का अनादर करने ही के निमित्त यह रचनाशैली ग्रहण की है और आचार, नीति तथा ज्ञान के बड़े-बड़े जटिल और मर्मस्पर्शी विषय रूपक द्वारा दर्शाये हैं पर जनता इन गज़लों के आशय को अपने चित्त और मन की वृत्तियों के अनुसार ही समझती है। कीर्तन में जो स्वर्गीय आनंद एक भक्त को होगा वह विलासान्ध मनुष्य को कदापि नहीं हो सकता। वह अपने चरित्र और

स्वभाव की दुर्बलता के कारण ऊपरी आशय ही का आनंद उठाता है। मर्म तक उसकी स्थूल बुद्धि पहुँच ही नहीं सकती। यह शैली कुछ ऐसी सर्वप्रिय हो गई है कि अब फ़ारसी या उर्दू कवियों को उसका त्याग या संशोधन करने का साहस ही नहीं हो सकता। श्रोताओं को उन गज़लों में कुछ आनन्द ही न आयेगा जो इस शैली के अनुकूल न हों। इस विषय में सादी के उर्दू जीवनकार मौलाना अलताफ हुसेन। हाली ने बड़ी उपयुक्त बातें लिखी हैं, जिन्हें पढ़कर पाठक स्वयं जान जायँगे कि उर्दू ही के कवि और लेखक इस विषय में क्या सम्मति रखते हैं

इन गज़लों के विषय में प्रायः लोग परिचित हैं। यह सर्वदा बुद्धि और ज्ञान, मान और मर्यादा, धर्म और सिद्धान्त, धन और अधिकार की उपेक्षा करती है तथा दरिद्रता और अपमान, अविद्या और अज्ञान को सर्वश्रेष्ठ बतलाती है। संसार पर लात मारना, बुद्धि से कभी काम न लेना, संतोष और विरति के नशे में अपने जीवन को नष्ट और मनुष्यत्व का पतन करना, संसार को असार और अनित्य समझते रहना, किसी वस्तु के तत्त्व के जानने की चेष्टा न करना, सुप्रबंध तथा मितव्यता को अवगुण समझना, जो कुछ हाथ लगे उसे तुरन्त व्यर्थ खो देना और इसी प्रकार की और कितनी ही बातें उनसे प्रकट होती हैं। विदित ही है कि यह विषय बेफिक्रों और नवयुवकों को स्वभावतः रुचिकर प्रतीत होते हैं....यद्यपि यह सिद्ध करना कठिन है कि

हमारा वर्तमान नैतिक पतन इन्हीं गज़लों का परिणाम है, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि श्रृंगार और वैराग्य की कविता ने इस दशा को पुष्ट करने में विशेष भाग लिया है।

11. क़सीदे

कसीदा फ़ारसी कविता के उस अंग को कहते हैं जिसमें कवि किसी महान पुरुष या किसी विशेष वस्तु की प्रशंसा करता है। जिस प्रकार भूषण, मतिराम, केशव आदि कविजन अपने समकालीन महीपतियों या पदाधिकारियों की प्रशंसा करके नाम, धन तथा यश प्राप्त करते थे, उसी प्रकार मुसलमान बादशाहों के दरबार में भी इसी विशेष काम के लिये कवियों को सम्मान का स्थान मिलता था। उनका काम यही था कि कतिपय अवसरों पर अपने बादशाह का गुणगान करे। इसके लिए कवियों की बड़ी-बड़ी जागीरें मिलती थीं, यहाँ तक कि एक-एक शेर का पारितोषिक एक-एक लाख दीनार (जो पच्चीस रुपये के बराबर होता है) तक जा पहुँचता था। शिवाजी ने भूषण का जैसा सत्कार किया था, यदि यह अत्युक्ति न हो तो ईरानी कवियों के संबंध में भी उनके अलौकिक सत्कार की कथायें सच्ची

मानने में कोई बाधा न होनी चाहिए। यह प्रथा ऐसी अधिक हो गई थी कि किसी बादशाह का दरबार कवियों से खाली न होता था। इसके अतिरिक्त हज़ारों कवि भ्रमण करके बादशाहों को क़सीदे सुनाते फिरते थे। विद्वानों की एक बड़ी संख्या इसी झूठी सराहना पर अपनी आत्मा का बलिदान किया करती थी। और कसीदों की रचना शैली ऐसी विकृत हो गयी थी कि खुदा की पनाह। शायर लोग प्रशंसा में ज़मीन और आसमान के कुल्लावे मिलाते थे। प्रशंसा क्या, वह एक प्रकार की अप्रशंसा हो जाती थी। किसी के दानव्रत का बखान करते तो समुद्र के मोती और संसार की समस्त खनिज सम्पदा उसके लिए थोड़ी हो जाती थी। उसकी वीरता को बखानते तो सूर्य और चन्द्र उसके घोड़ों के टाप बन जाते थे। जो कवि जितना ही लंबा और बेसिर पैर की बातों से भरा हुआ कसीदा कहे उसका उतना ही सम्मान होता था। इन कसीदों में अत्युक्ति ही नहीं, बड़ा पांडित्य भरा जाता था; वेदान्त दर्शन तथा शास्त्रों के बड़े-बड़े गहन विषयों का उनमें समावेश होता था। उनका एक-एक शब्द अलंकारों से विभूषित किया जाता था। आज उन कसीदों को पढ़िये तो रचने वाली की विद्या, बुद्धि तथा काव्य चमत्कार का कायल होना पड़ता है। शेख़ सादी के पूर्व इस प्रथा का बड़ा जोर था। अनवरी, खशकानी आदि कवि सम्राट सादी के पहले ही अपने क़सीदे लिख चुके थे जिन्हें देखकर आज हम चकित हो जाते हैं। पर सादी ने उस

प्रचलित पद्धति को ग्रहण न किया। उनका निर्भय, निस्पृह, निवृत्त जीवन इस काम के लिये न बना था। उन्हें स्वभावतः इस भाटपने से घृणा होती थी और सर्वोच्च कवियों को सांसारिक लाभ के लिए अपनी योग्यता का इस भाँति दुरुपयोग करते देखकर हार्दिक दुख होता था। एक स्थान पर उन्होंने लिखा है, लोग मुझसे कहते हैं कि हे सादी तू क्यों कष्ट उठाता है और क्यों अपनी कवित्व शक्ति से लाभ नहीं उठाता? यदि तू क़सीदे कहे तो निहाल हो जाय। मगर मुझसे यह नहीं हो सकता कि किसी रईस या अमीर के द्वार पर अपना स्वार्थ लेकर भिक्षुकों की भाँति जाऊँ। यदि कोई एक जौ भर गुण के बदले मुझको सौ कोष प्रदान कर दे तो वह चाहे कितना ही प्रशंसनीय हो पर मैं घृणित हो जाऊँगा।

लेकिन मनुष्य पर अपने समय का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है अतएव सादी ने भी क़सीदे कहे हैं, लेकिन उन्हें धन-सम्पत्ति की लालसा तो थी नहीं कि वह झूठी तारीफों के पुल बाँधता। अपने कसीदों को उसने प्रायः महीधारों तथा अधिकारियों को न्याय, दया, नम्रता आदि के सदुपदेश का साधन मात्र बनाया है। इन महानुभावों को वह सामान्य रीति से उपदेश न दे सकता था, इसलिए कसीदों के द्वारा इस कर्त्तव्य का प्रतिपादन किया है। जब किसी की प्रशंसा भी की है तो सरल और स्वाभाविक रीति से। उनमें अलंकारों और उक्तियों की भरमार नहीं। और न वह केवल स्वार्थ सिद्धि के

अभिप्राय से लिखे गये हैं, वरन् उनमें सच्ची सहृदयता और आत्मीयता झलकती है क्योंकि उन्होंने ऐसे ही लोगों की ऐसी प्रशंसा की है जो प्रशंसा के पात्र थे। उनके सरल कसीदों को देखकर बहुत लोग अनुमान करते हैं कि सादी उनके रचने में कुशल न थे। पर वास्तव में ऐसा नहीं है। वह सरल स्वभाव मनुष्य थे; एक साधारण-सी बात को घुमा-फिरा कर शब्दों के व्यर्थ आडंबर के साथ वर्णन करने की उन्हें आदत न थी। और यद्यपि उनके कसीदों में ओज और गुरुत्व नहीं हैं पर माधुर्य और सरलता कूट-कूटकर भरी हुई है। इतना ही नहीं उनको पढ़कर हृदय पर एक पवित्र प्रभाव पड़ता है। यहाँ हम सादी के दो कसीदों के कुछ शेरों का भावार्थ देते हैं जिससे उनकी रचना शैली का प्रमाण मिल जायगा

1. फ़ारस के बादशाह अताबक अबूबक्र की शान में –

इस मुल्क में बड़े-बड़े बादशाहों ने राज्य किया लेकिन जीवन का अंत हो जाने पर ठोकरें खाने लगे।

तुझे ईश्वरीय आज्ञा का पालन करना चाहिये। विभव और सम्पत्ति की जरूरत

नहीं, ढोल के सदृश गरजने की क्या आवश्यकता है। जब भीतर बिल्कुल खाली है।

कर्त्तव्य पालना सीख, यही स्वर्ग मार्ग की सामग्री है, उस दिन ऊदसीज़ (बर्तन जिसमें अगर जलाते हैं) और अंबरसाय (वह बर्तन जिसमें अंबर घिसते हैं) कुछ काम न आयेंगे।

जो मनुष्य प्रजा को दुख दे वह देश का द्रोही है, उसके मारे जाने का हुक्म दे।

पूर्व तक पश्चिम तक अपना राज्य बढ़ा, पर रणभूमि में मत जा, यह इस प्रकार हो सकता है कि दिलों को अपने हाथ में ले, और उनकी मैल धो। मैं मिष्ट भाषी कवियों की भाँति यह न कहूँगा कि तू कस्तूरी की वर्षा करने वाला मेघ है।

जितनी आयु लिखी हुई है वह घट-बढ़ नहीं सकती तो यह कहने से क्या फ़ायदा कि तू कयामत तक जिन्दा और सलामत रह।

2. फ़कीरों का काम बादशाहों की बड़ाई करना नहीं है, जो मैं कहूँ कि तू समुद्र के समान अगाध और मेघ के समान दानशील है।

मैं यह न कहूँगा कि दया में तू औलिया से बढ़ा हुआ है, न यह कि न्याय में तू बादशाहों का नेता है।

और यदि यह सब गुण तुझ में हैं तो तुझे उपदेश करना और भी उत्तम है क्योंकि सच्चे प्रेम और श्रद्धा के प्रकट करने का यही मार्ग है।

खुदा ने यूसुफ को इसलिए सम्मानित नहीं किया कि वह रूपवान था, बल्कि इसलिये कि वह सत्कर्मी था।

सेना, धन, ऐश्वर्य, एक भी सुकीर्ति के सिवाय तेरे काम न आयेंगे।

तेरे आधिपत्य के स्थिर रहने का बस एक ही मन्त्र है, कि किसी सबल का हाथ किसी निर्बल पर न उठने पाये।

मैं यह आशीर्वाद न दूँगा कि तू सहस्र वर्षों तक जीवित रहे क्योंकि मैं जानता हूँ कि तू इस अत्युक्ति समझेगा।

तुझे कीर्ति और यश लाभ करने में अधिक सामर्थ्य हो कि न्याय का पालन करे और अन्याय की ताड़ना करे।

12. अन्य प्रसंग

प्रमोद मिलती हैं जिनमें कुछ सुरुचि के पद से इतनी गिर गई हैं कि उन्हें अश्लील कहा जा सकता है। हमने इस पुस्तक के पहले संस्करण में पृष्ठ सतासी पर यह लिखा था कि यह कविताएँ सादी की कदापि नहीं हो सकती, लेकिन इस विषय में विशेष छानबीन करने पर यह ज्ञात हुआ कि वास्तव में सादी ही उनके कर्त्ता हैं। और यह सादी के प्रतिभा रूपी चन्द्र पर ऐसा धब्बा है जो किसी तरह नहीं मिट सकता। जब विचार करते हैं कि शेख़ सादी कितने नीतिवान, कितने सदाचारी, कितने सद्गुणी महान पुरुष थे तो इन अश्लील कविताओं को देखकर बड़ा खेद होता है। इस भाग में सादी ने अपनी नीतेज्ञता और गांभीरता को त्याग कर खूब गंदी बातें लिखी हैं। इसमें तो कोई संदेह नहीं कि सादी विनोदशील पुरुष थे और विनोदशीलता स्वभाव का दूषण नहीं, वरन गुण है, विशेष करके नीत्युपदेश में वहाँ उसकी बड़ी आवश्यकता होती है, जहाँ उपदेश का दुष्चार और दुष्टता की आलोचना करनी पड़ती है। यह गुण बहुधा उपदेश को रुचिकर बना दिया करता है, पर वही बात जब औचित्य से आगे बढ़ जाती है तो अश्लील हो जाती है। देखना यह है कि शेख़ सादी ने यह रचना विनोदार्थ की या किसी और कारण से। यह बात उनकी पंक्तियों से स्पष्ट विदित हो जाती है जो उन्होंने इस भाग के आदि में क्षमा प्रार्थना के भाव से लिखी हैं

''एक बादशाह ने मुझे बाध्य किया कि मैं कुछ अश्लील बातें लिखूँ। जब मैंने इंकार किया तो उसने मुझे मार डालने की धमकी दी। इसलिए विवश होकर मुझे यह कविताएँ लिखनी पड़ीं और मैं इसके लिए परमात्मा से क्षमा माँगता हूँ।''

इससे यह पूर्णतः सिद्ध हो जाता है कि सादी ने ये कविताएँ विवश होकर रचीं और वह उनके लिए लज्जित हैं। वह स्वयं इसे अनुचित समझते हैं। यद्यपि इससे सादी की निर्ममता पर कुठाराघात होता है पर उस समय की रुचि तथा सभ्यता को देखते हुए यही बहुत है कि सादी ने इस रचना पर खेद तो प्रकट किया। उस समय कविगण बादशाहों के आमोद-प्रमोद के निमित्त प्रायः गंदी कविताएँ लिखा करते थे। यह प्रथा ऐसी प्रचलित हो गई थी कि बड़े-बड़े विद्वानों और पंडितों को भी उनके लिखने में लेशमात्र संकोच न होता था। विद्वज्जन इन रचनाओं का आनंद उठाते थे। रसिकगण उनकी सराहना करते थे। ऐसी दशा में सादी ने भी यदि इन कविताओं की रचना को बहुत आपत्तिजनक न समझा हो तो आश्चर्य की बात नहीं। उन्होंने लज्जा तथा खेद प्रकट किया, इसी पर संतोष करना चाहिए। इन कविताओं में वह प्रफुल्लता और आनंद प्रदायिनी विनोदशीलता नहीं है जो उनका एक प्रधान गुण है। इससे विदित होता है कि शेख ने अवश्य उनकी रचना दुराग्रह से की, अपनी रुचि से नहीं।